ISSN 2815-8326

हिंदी त्रैमासिक

पहचान

देश से हम, हमसे देश

वर्ष 3 | अंक 1 | जुलाई - सितंबर 2024 | पृष्ठ संख्या 32

प्रधान संपादक : प्रीता व्यास

आवरण चित्र - सायंदीप बंधोपाध्याय

BEST
CONSTRUCTION
BETTER
HOME

ArchPoint Ltd

ARCHPOINT LTD

You Dream, We make the Dreams True!

Our Best Services:

- PROVIDING END-TO-END RESOURCE CONSENT, EPA AND BUILDING CONSENT SERVICES
- FEASIBILITY STUDIES - PRE & POST PURCHASE OF YOUR PROPERTY
- ARCHITECTURAL DESIGNING
- PLANNING & PROJECT MANAGEMENT
- SURVEYING
- GEOTECHNICAL INVESTIGATIONS & REPORTS
- CIVIL ENGINEERING FOR INFRASTRUCTURE DESIGNING
- STRUCTURAL ENGINEERING

engineering new zealand
LICENSED BUILDING PRACTITIONER BUILDING CONFIDENCE
PMI NEW ZEALAND CHAPTER
ADNZ Professional Member

64 21848 552 archpoint.co.nz

GODWIN-AUSTEN

GODWIN-AUSTEN

You Wish, We bring the wishes to Reality!

Our Best Services:

- Subdivisions & Building Construction on Turn Key Basis
- Land and Home Packages
- Design & Build
- 10 Years Master Builder Guarantee
- Auckland Wide Operations

MASTER BUILDERS
PMI NEW ZEALAND CHAPTER

64 21889 918 OR 64 21848 552 godwinausten.co.nz

हिंदी त्रैमासिक
पहचान
देश से हम, हमसे देश

संस्थापक/ प्रधान संपादक
प्रीता व्यास

सलाहकार संपादक
रोहित कृष्ण नंदन

सहयोगी संपादक
माला चौहान

ले आउट/ ग्राफिक्स
Design n Print, India

कवर पेज
सायंदीप बंधोपाध्याय

प्रकाशक
पहचान
आकलैंड, न्यूज़ीलैंड
editor@pehachaan.com

पत्रिका में प्रकाशित लेख, रचनाएं, साक्षात्कार लेखकों के निजी विचार हैं, उनसे प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं. रचनाओं की मौलिकता के लिए लेखक स्वयं जिम्मेवार है. कुछ चित्र और लेखों में प्रयुक्त कुछ आंकड़े इंटरनेट वेबसाइट से संकलित किये गए हो सकते हैं.

दो शब्द

'दिवस जात नहिं लागत बारा' यानी समय बीतते देर नहीं लगती. देखते ही देखते एक साल और पूरा हो गया. 'पहचान' इस अंक के साथ अपने तीसरे वर्ष में प्रवेश कर रही है. सांस्कृतिक मूल्यों के ह्रास के इस दौर में एक अच्छी साहित्यिक पत्रिका का जीवित रह पाना, दीर्घायु हो पाना सिर्फ संपादक की ज़िद और जुनून के सहारे संभव नहीं जब तक कि पाठकों का, रचनाकारों का सक्रिय सहयोग ना मिले. तो अपनी बात धन्यवाद से ही आरंभ करती हूं.

अगस्त आ रहा है यानी भारत का स्वतंत्रता दिवस आ रहा है यानी राखी आ रही है और साथ ही बहुत सारे अंतर्राष्ट्रीय दिवस आ रहे हैं जिनमें वर्ल्ड लंग कैंसर दिवस भी शामिल है. दुनिया भर में ये मृत्यु के कारणों में नंबर दो पर है और एक अनुमान है कि सन 2050 तक इसके केसेज़ 77 प्रतिशत बढ़ जाएंगे. लोग ये मान कर निश्चिन्त होते हैं कि इसका खतरा तो उनको होता है जो स्मोकिंग करते हैं लेकिन दुर्भाग्य से ये उनको भी हो जाता है जिनने जीवन में कभी धूम्रपान नहीं किया और ऐसे केसेज़ 15-20 प्रतिशत होते हैं. तो कहां से नुक्सान पहुंचता है इनके फेंफड़ों को ?

दोषी है वो हवा जिसमें हम सांस लेते हैं. हवा का भी क्या कुसूर, हमने ही लापरवाहियां कीं, पर्यावरण खुद ज़हरीला बना डाला हमने. कारखानों का धुंवां, वाहनों का धुंवां, कंक्रीट के जंगलों का उगते जाना और पेड़ पौधों का हरियाली का कम होते जाना हमें ऐसे कठिन समय तक ले आया है. अब इस समस्या का कोई क्विक फिक्स तो है नहीं लेकिन अब भी हम अगर जाग जाएं और ज़िम्मेदारी के साथ हर नागरिक अपने हिस्से का कुछ काम रोज़ पर्यावरण संरक्षण की दिशा में करता चले तो संभवत: स्थितियां जल्द ही नियंत्रण से बाहर ना हो सकें.

हाल ही में ऐसे दो फेंफड़ों के कैंसर के मरीज़ों की मौत हुई जो इत्तिफाकन परिचित थे. दोनों बड़े ही पूजापाठ वाले थे. डॉ. के कहा कि हो सकता है अगरबत्ती के धुंवे से उनके फेंफड़ों को नुकसान पहुंचा हो. अगरबत्ती को आस्था से जोड़ कर नाराज़ होने के बजाये थोड़ा सा समझने की ज़रुरत है. बंद कमरों में या छोटे कमरों में अगरबत्ती का ज़्यादा प्रयोग कैंसर नहीं लेकिन सांस की दिक्कतें तो ज़रूर पैदा कर सकता है और कुछ मामलों में कैंसर भी. इस पर काफी रिसर्च हो चुकी है और जारी है.

अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें, अपने पर्यावरण का ध्यान रखें और अपनी इस 'पहचान' को इसी तरह अपना साथ, सहयोग और आशीर्वाद देते रहें. यही मेरा बल है. जुड़िये और जुड़े रहिये.

प्रीता व्यास

इस अंक में...

पाठकीय प्रतिक्रियाएं		5
आलेख		
'शहीद' कहना अपमानजनक	हरी राम यादव	6-8
कहानी		
'परसोना नॉन ग्राटा'	राम नगीना मौर्य	9-12
व्यंग्य		
हू केयर्स?	रोहित कुमार हैप्पी	13-14
धरोहर		
गढ़पहरा	कुमार रूपेश	15
कविता		
धर्मपाल महेंद्र जैन		16
हिंदी अनुवाद- प्रदीप सिंह (हिसार)		17
ममता पंडित		18
राजेश पाठक		19
चरणसिंह अमी		20
गज़ल		
फ़ानी जोधपुरी		21
शकील आज़मी		22
फिल्म		
ट्रेजडी किंग दिलीप कुमार	डॉ. भूपेंद्र बिष्ट	23.24
बाल कहानी		
नेहा का छाता	कुसुम अग्रवाल	25
रसोई		
भूले बिसरे स्वाद : बेर और बिरचुन	ऋतु चौधरी	26
पुस्तक समीक्षा		
मिस्टर मीडिया : मीडिया की दुनिया का काला -सफ़ेद	समीक्षक : मो. वाजिद अली	27
प्रजा ही विष्णु है : महाभारत कथा का लोकांतरात्मक पक्ष	समीक्षक : भारती पाठक	28
नदियों के संकट पर गंभीर विश्लेषण	समीक्षक : रोहित कौशिक	29
आंचलिक भारत को जानें बच्चे	समीक्षक : मो. वाजिद अली	30

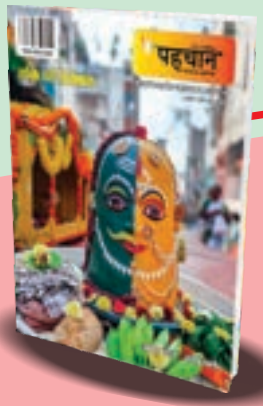

पाठकीय प्रतिक्रियाएं

सुदूर ऑकलैंड (न्यूजीलैंड) से निकलने वाली त्रैमासिक पत्रिका 'पहचान' ने अप्रैल-जून 2024 अंक के साथ अपने प्रकाशन के दो वर्ष पूरे किए हैं और इस बीच पत्रिका ने खूब पहचान भी हासिल कर ली है.

संपादक प्रीता व्यास पत्रिका के मास्ट हेड के साथ चाहे टैग लाइन अंतर्राष्ट्रीय हिंदी मैगजीन, लगाएं या नहीं तब भी पत्रिका की धज बड़े मेयार की रहती है. नये अंक की शानदार साज सज्जा और कंटेंट इसकी गवाही आप देता है.

पूरा अंक लोक संस्कृति और आंचलिक पर्व पर केंद्रित है. ऐसा नहीं कि प्रवासी भारतीयों के लिए ही यह सब उपादेय हो, अपितु हमारे यहां भी बिसरा दिए गए मेलों, त्यौहारों की याद को हरा करते जाने और नई पीढ़ी के लिए पारंपरिक मान्यताओं, आस्थाओं की अर्थवत्ता को फिर से जिंदा करने की यह एक श्लाघनीय कोशिश भी है.

बुंदेलखंड और आसपास के इलाकों में अक्षय तृतीया को मनाया जाने वाला अनूठा पर्व 'पुतरी पूजन' पर प्रवीणा त्रिपाठी का आलेख पढ़ा जाने योग्य है. माना जाता है कि बरगद के पेड़ के नीचे इस दिन कुंवारी बेटियां गुड्डे-गुड़ियों की शादी रचाने का उत्स खेलें तो उन्हें मनमाफिक वर की प्राप्ति होती है. इसी तरह खंडवा (म.प्र.) के पारंपरिक 'गणगौर' अनुष्ठान पर महिमा सोनी की विरल सामग्री भी बढ़िया लगी.

एफटीआई, पुणे के छात्र रहे सुदीप सोहनी की इसी विषय पर आधा घंटे की डॉक्यूमेंट्री दुनिया भर के कई समारोहों में हालिया अपने प्रदर्शन से प्रशंसा बटोर रही है, फिल्म पर भी एक लेख है, जो बताता है कि परंपरा कैसे विरासत में परिवर्तित होती जाती है.

साथ में, पशुओं के प्रति कृतज्ञता का उत्सव 'सोहराय' एवं वसंत विषुव पर आधारित 'नवरोज़' आदि पर जानकारी परक कतिपय दूसरी रचनाएं भी जुटाई गई हैं.

अंक की उपलब्धि भारतेंदु युग के कवि ईसुरी वाला आलेख है. डॉ. के बी एल पांडेय काफी कुछ बता सके कि 'बुंदेली के महाकवि ईसुरी को कैसे पढ़ें?'

ईसुरी ने फाग के रूप में जो भी लिखा वह ठेठ गंवई अंदाज़ का तराना है. लोक जीवन की सरसता में मादकता का आयाम सामने ला पाने में ईसुरी को महारथ हासिल थी. एक प्रसंग यह भी आता है कि अपनी काल्पनिक प्रेमिका 'रजऊ' को संबोधित कवितावली के लिए ईसुरी को ख़ासा विरोध झेलना पड़ा था.

जन से जुड़ी और लोक को लेकर गहरे सरोकार की इस पत्रिका को Pehachaan.com पर लॉग आन करके पढ़ा जा सकता है.

डॉ. भूपेंद्र बिष्ट, भारत

'पहचान' त्रैमासिक पत्रिका का 'लोक पर्व अंक' पढ़ते हुए जी खुश हो गया. इसकी संपादक प्रीता व्यास जी हैं. पुस्तक के तीस पन्नों में उन्होंने गागर में सागर भर दिया है. सोहराय, नवरोज़, सतुआन, रक्कस बाबा, नौरता, पुतरी पूजन, हरछठ आदि लोक पर्वों की जानकारी ने इस अंक को संग्रहणीय बना दिया है. पुस्तक समीक्षा में 'लघुकथा के विविध आयाम' पर लिखी समीक्षा को भी शामिल किया गया है. पत्रिका पढ़ते हुए मन प्रफुल्लित हो गया. प्रवासी भारतीय निरंतर हिंदी के प्रचार प्रसार को लेकर सजग हैं. प्रीता व्यास जी को खूब बधाई व शुभकामनाएं.

अंजू खरबंदा, भारत

लोक पर्व विशेषांक बहुत बढ़िया अंक. पृष्ठ संख्या बढ़ाने की कोशिश करें तो अच्छा है.

डॉ. अखिलेश सिंह, भारत

सारे लेख पढ़े. सभी अंक सराहनीय. पत्रिका बहुत महत्वपूर्ण है.

शिव चरण चौहान, भारत

'शहीद' कहना अपमानजनक

हरी राम यादव

वीरगति प्राप्त सैनिकों को 'शहीद' कहना अपमानजनक है. मां और मातृभूमि दो ऐसे संबंधात्मक शब्द हैं जिनका नाम लेते ही श्रद्धा और आदर से सिर झुक जाता है, इनका जितना वंदन तथा अभिनंदन किया जाए वह कम है. मां और मातृभूमि के आदर तथा सुरक्षा के प्रति हमारे देश के लोगों में एक महत्वपूर्ण भाव, विचार रहा है. इस विचार से ओतप्रोत होकर अब तक हमारे देश के असंख्य वीरों ने विभिन्न युद्धों तथा यौद्धिक संक्रियाओं में अपनी मातृभूमि की सुरक्षा में अपना सर्वोच्च बलिदान दिया है. इन वीर सैनिकों की वीरता को सम्मान से संबोधित करने के लिए आमतौर पर शहीद शब्द का उपयोग किया जाता है, जो कि सैनिकों के संदर्भ में उचित नहीं है.

युद्ध या यौद्धिक संक्रियाओं में देश की रक्षा करते हुए अपने प्राणों की बाजी लगा देने वाले वीर सैनिकों को शहीद न कहा जाए, इसको लेकर पिछले वर्ष सेना मुख्यालय ने अपने सभी कमान को एक परिपत्र जारी किया था. सेना ने अपने उस परिपत्र में लिखा था कि देश के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले सैनिक को 'Martyr' अर्थात 'शहीद' कहा जाता है जो कि ठीक नहीं है.

सेना ने अपने पत्र में देश की एकता और अखंडता की रक्षा के लिए वीरगति प्राप्त करने वाले सैनिकों के लिए छह शब्दों के प्रयोग का सुझाव भी दिया था इन शब्दों में Killed in action (कार्रवाई के दौरान मृत्यु), Laid down their lives (अपना जीवन न्योछावर करना), Supreme sacrifice for Nation (देश के लिए सर्वोच्च बलिदान), Fallen Heroes (लड़ाई में मारे गए हीरो), Indian Army braves (भारतीय सेना के वीर), Fallen Soldiers (ऑपरेशन में मारे गए सैनिक) है.

भारतीय सेना और रक्षा मंत्रालय कई बार यह साफ कर चुका है कि सेना की शब्दावली में कहीं भी Martyr या शहीद

शब्द का का इस्तेमाल नहीं किया जाता है. यदि कोई सैनिक लड़ाई के दौरान सर्वोच्च बलिदान देता है तो उसे Battle Casualty कहा जाता है. यह प्रश्न संसद में भी उठा था. 22 दिसंबर 2015 को गृह मंत्रालय की ओर से संसद में जवाब दिया गया था कि शहीद या Martyr शब्द का प्रयोग ना तो सेना और ना ही सेंट्रल आर्म्ड फोर्सेस के लिए किया जाता है. 2017 में एक आर टी आई के तहत मांगी गई सूचना के उत्तर में रक्षा मंत्रालय और गृह मंत्रालय ने कहा था कि हम Martyr या शहीद शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं.

शहीद शब्द मुख्य रूप से ग्रीक भाषा का शब्द है. प्राचीन ग्रीक में लिखी गई बाइबिल में इस शब्द का जिक्र है. बाद में इस शब्द का इस्तेमाल उन लोगों के लिए किया जाने लगा जो धर्म के लिए अपनी जान देते थे. शहीद शब्द को अंग्रेजी में 'Martyr' और शहादत शब्द को अंग्रेजी में 'Martyrdom' कहते हैं.

हमारे देश में भी काफी समय पहले से 'शहीद' शब्द का प्रयोग उस व्यक्ति के लिए किया जाता है जिसकी मृत्यु किसी राजनीतिक या धार्मिक कृत्य के लिए सजा के तौर पर हुई हो या वह व्यक्ति अपनी राजनीतिक या धार्मिक सोच के लिए मृत्यु को प्राप्त हुआ हो. इस शब्द का जुड़ाव शुरुआत से ही ईसाई धर्म से रहा है. ईसाई धर्म के शुरुआती 200 वर्षों की यदि हम बात करें तो जब ईसा मसीह को सूली पर चढ़ा दिया गया था, उस समय ईसाईयों को रोमन साम्राज्य में बहुत यातनाएं दी जाती थीं. इन यातनाओं के बाद जो लोग मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे तो उन्हें उस समय Martyr कहा जाता था.

21वीं शताब्दी में शहीद शब्द ग्रीक और अरबी भाषा से होता हुआ हमारे देश भारत में पहुंचा और यह उर्दू और हिंदी भाषा में धड़ल्ले से प्रयोग होने लगा. 20वीं और 21वीं शताब्दी में शहीद शब्द का इस्तेमाल मुख्य रूप से स्वतंत्रता आंदोलनों में अपने देश और समाज के लिए बलिदान देने वाले लोगों के लिए होने लगा. आज भी देश के क्रांतिकारियों सरदार भगत सिंह, राजगुरू, सुखदेव, चंद्रशेखर आजाद तथा असफाक उल्ला खान आदि के लिए शहीद शब्द का प्रयोग किया जाता है.

सेना द्वारा परिपत्र जारी करने तथा संसद में सरकार के कहने के बावजूद भी भारत के केंद्रीय और राज्य सरकारों के सैनिकों से संबंधित कार्यालयों में वीरगति प्राप्त करने वाले सैनिकों के लिए अंग्रेजी में मार्टियर और हिंदी में शहीद शब्द का प्रयोग खूब किया जा रहा है. इस शब्द का प्रयोग करने में इलेक्ट्रॉनिक तथा प्रिंट मीडिया भी पीछे नहीं है. विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी आयोजनों में भी, बड़े-बड़े मंचों से, जिम्मेदार पदों पर बैठे हुए लोग इसका प्रयोग धड़ल्ले से कर रहे हैं. देश की रक्षा में अपने प्राणों की बाजी लगा देने वाले सैनिकों से संबंधित पत्राचार में तथा राज्य सरकारों के विभिन्न सरकारी आदेशों में भी शहीद शब्द का प्रयोग लगातार जारी है. यहां तक कि राज्य सरकार में जिस विभाग की जिम्मेदारी इस शब्द के चलन को रोकने और सेना द्वारा सुझाए गए शब्दों के प्रयोग की जानकारी राज्य सरकारों और अपने अधीनस्थ कार्यालयों को देने की है, वह खुद ही इन शब्दों का प्रयोग अपने रोजमर्रा के पत्र व्यवहार में लगातार कर रहे हैं.

इसी तरह वीरगति प्राप्त करने वाले सैनिकों की पत्नियों के लिए वीर नारी तथा वीरांगना जैसे शब्दों का प्रयोग करने के लिए सेना द्वारा समय-समय पर कहा गया है लेकिन आज भी सरकारी कार्यालयों में उनके लिए अंग्रेजी में वार विडो और हिंदी में विधवा जैसे असम्मानजनक शब्द सरकारी फाइलों में खूब लिखे जाते हैं.

सैनिक शब्द मन में एक सम्मान का भाव प्रकट करता है. सैनिक शब्द सुनते ही मन में वह भाव हिलोरें मारने लगता है जिसका वर्णन करना कठिन है. एक सैनिक को सैनिक बनाए रखने में उसके परिवार की भूमिका अत्यंत सराहनीय होती है. वह सरहद पर निश्चित होकर निगहबानी तभी कर पाता है जब उसका परिवार उसे निश्चितता प्रदान करता है. इसलिए सैनिकों के सम्मान के साथ-साथ उनके परिवार भी बराबर के सम्मान के हकदार है, इसलिए मेरा मानना है कि एक सेवानिवृत्त सैनिक की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी को भी विधवा न कहा जाए. उसके लिए दिवंगत सैनिक की पत्नी जैसे शब्दों का प्रयोग करके सम्मान दिया जा सकता है. ऐसे सम्मानित और समृद्ध विचार हमारे देश के सैनिक समाज के मनोबल को और ऊंचा करेंगे और देश की गरिमा को और ऊंचाई प्रदान करेंगे.

राज्य सैनिक बोर्ड तथा राज्य सरकारों को चाहिए कि सैनिकों के सम्मान में सेना द्वारा सुझाए गए शब्दों को अमल में लाने के लिए अपने पूर्व के सभी सरकारी आदेशों में परिवर्तन कर सम्मानजनक शब्दों के प्रयोग के लिए अपने अधीन सभी विभागों को उचित आदेश दें, जिससे चल रही ग़लत परिपाटी बंद हो और वीरगति प्राप्त सैनिक, वीर नारियां तथा दिवंगत सैनिकों की पत्नियां, जिस सम्मान की हकदार हैं, उन्हें उनके हिस्से का सम्मान मिल सके. ■

'परसोना नॉन ग्राटा'

राम नगीना मौर्य

''पापा! जरा इधर तो आइये? मिथिलेश्वर अंकल ने आज सोशल मीडिया पर ताशी दीदी की शादी की जो ये बाईस-तेइस तस्वीरें पोस्ट की हैं, उन्हें जरा गौर से देखिये? ताशी दीदी की शादी में तो हम सभी लोग गये थे लेकिन किसी भी फोटो में आप, मम्मी या मैं, कहीं भी नहीं दिख रहे. ताशी दीदी ने जयमाल के बाद, अपनी सहेलियों संग जो फोटो सेशन कराया था, उसमें तो मैं भी तीन-चार जगह थी लेकिन वो वाली एक भी फोटो यहां नहीं दिख रही? ये देखिये, मेरे मोबाइल में तो, ताशी दीदी संग दस बारह फोटोज भी हैं.''

''हां बेटा, तुमने ठीक गौर किया. हम लोग तो किसी भी फोटो में नहीं हैं. ये तो वाकई आश्चर्यजनक बात है.''

''और बाकी कुछ अंकल जी, ये एस.पी.अंकल, ये इंजीनियर अंकल, ये डॉक्टर अंकल, और जरा ये गायिका सुषमा आंटी जी की भी पोस्ट देखिये? इन लोगों ने भी शादी-समारोह की तस्वीरें अपने-अपने वॉल पर पोस्ट की हैं, लेकिन उनके भी किसी पोस्ट में हम लोग नहीं दिख रहे हैं?''

''बड़ी अजीब बात है. बच्चों के ग्रुप में एक फोटो ऐसी जरूर है, जिसमें तुम हो, हम लोग तो सचमुच कहीं नहीं दिख रहे हैं? क्या वजह हो सकती है? खैर, अभी तुम जाओ. अगले हफ्ते से तुम्हारे एग्जाम शुरू होने वाले हैं. अपनी पढ़ाई की तरफ ध्यान दो. मैं देख रहा हूं आजकल तुम्हारे हाथ में हर वक्त ये स्मार्टफोन रहता है. अगर एग्जाम में अच्छे नंबर लाने हैं तो सोशल मीडिया से कुछ दिन के लिए दूरी बना लो.''

सम्यक जी, अब अपनी बिटिया को क्या समझाते? उन्होंने

तो उसे सोशल मीडिया पर अनावश्यक समय बिताने के बजाय पढ़ाई की तरफ ध्यान देने का लेक्चर पिलाते, हल्के झिड़कते, उसे वहां से जाने के लिए कह दिया, लेकिन उन तस्वीरों में उनके परिवार को नेग्लेक्ट करने के कारणों पर तो उनके दिलो-दिमाग में मंथन चल ही रहा था. देर तक इसके पीछे छिपे कारणों पर सोचते, भन्नाए, मौन साधे बैठे रहे.

बहरहाल, अगर सम्यक जी अपनी बिटिया को इसके पीछे के कारणों के बारे में नहीं बता पाये, तो क्या हमारा फर्ज नहीं बनता कि हम, आप सभी को उन कारणों के बारे में तफसील से बताएं कि सम्यक जी और उनके परिवार के लोगों की तस्वीरें, सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉर्मस पर साझा की गयी उन पोस्ट्स में क्यों नहीं हैं? जैसा कि हम सब वाकिफ हैं, हर कहानी का मध्य, अंत और शुरुआत होती है, इसकी भी है. हालांकि इसके लिए कुछ वर्ष पीछे जाकर, फिर वापस आना होगा.

सम्यक जी खाद्य महकमे में इंस्पेक्टर हैं. उनकी पत्नी

संगीता जी एक सरकारी स्कूल में अध्यापिका हैं. इन दोनों के एक बेटी वैशाली भी है, जो शहर के प्रतिष्ठित पब्लिक स्कूल में पढ़ती है. बिटिया, पढ़ने-लिखने में शुरू से ही होनहार रही है, लिहाजा उसके मां-बाप को उसे हमेशा ही प्रशासनिक अफसर के रूप में देखने की इच्छा रही लेकिन बिटिया तो किसी और मिट्टी की बनी हुई थी, उसने उन्हें साफ मना कर दिया. उसकी अभिरुचि प्रशासनिक सेवाओं में जाने के बजाय खुद का स्टार्टअप शुरू करने की थी.

फिलहाल, थोड़ी देर के लिए वैशाली बिटिया को यहीं छोड़ते हैं, और लौटते हैं उसके मां-बाप की तरफ. सम्यक जी की रुचि, अपने कार्य के साथ-साथ, मित्रमंडली संग यदा-कदा छिट-पुट सामाजिक कार्यों में भी रही है. उनकी अध्यापिका पत्नी संगीता जी भी कभी-कभार उनके साथ ऐसे कार्यों में प्रतिभाग कर लेतीं, जिससे सम्यक जी और उनकी पत्नी की खासी बड़ी मित्रमंडली हो गई. संगीता जी को अध्यापन के साथ-साथ कविताएं लिखने का भी शौक रहा है. यदा-कदा वो अपनी कविताएं, सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉर्मस पर साझा भी करती रहती हैं. जाहिर है, उनकी कविताओं को पसंद करने वालों में उनकी मित्र मंडली के ही ज्यादातर सदस्य रहते हैं. अमूमन हर कविता पर उन्हें सौ-डेढ़ सौ लाइक्स और पचास-साठ के आस-पास कमेंट्स आदि तो मिल ही जाते हैं. पिछले कुछ वर्षों से लगभग इसी तरह की दिनचर्याओं में उनका जीवन व्यतीत होता रहा.

यद्यपि सम्यक जी से मेरी गहरी दोस्ती नहीं है, जान-पहचान ही है परंतु एक ही शहर में पोस्टिंग होने के कारण राह चलते बाजार, कचहरी, मॉल, रेस्त्रां या किसी सरकारी दफ्तर आदि में यदा-कदा उनसे मुलाकात हो ही जाती है. काफी पहले वे किसी सज्जन के काम से, उन्हें लेकर मेरे घर भी आ चुके हैं. ड्राइंगरूम में किताबों की रैक देख कर, पढ़ने-लिखने की मेरी अभिरूचि देखते, पढ़ने के वास्ते वे मुझसे कुछ किताबें भी मांग कर ले गये थे. मुझे याद है कि कुछ किताबों संग तो उन्होंने विभिन्न भाव-मुद्रा में मेरे साथ फोटो भी खिंचवाए थे. किताबों में उनकी रूचि देखते मुझे लगा कि उन्हें भी पढ़ने का शौक है, सो मैंने उन्हें, पढ़कर लौटा देने की शर्त पर, कुछ किताबें दे दी थीं. लेकिन मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि अगले दिन उन्होंने मेरी किताबों संग विभिन्न मुद्राओं में उतारी गयीं वो तस्वीरें सोशलमीडिया पर साझा करते, मुझसे हुई मुलाकात के बारे में कशीदें काढ़ते, साहित्य की वर्तमान स्थिति पर देर तक चर्चा करने की बातें लिख मारी थीं. जबकि मुझे अच्छी तरह याद है, उन के संग मेरी ऐसी कोई बातचीत नहीं हुई थी. उन्होंने कुछ किताबों संग मेरे साथ फोटो जरूर खिंचवाए थे. हां, बाकी समय वे चाय-बिस्कुट और नमकीन पर ही हाथ साफ करते रहे. कहां साहित्य और कहां की साहित्यिक बातचीत ?

चूंकि उनकी आदत थी, जब-तब लोगों से मिलने पर उसे यादगार मुलाकात बताते, सोशल मीडिया पर तस्वीरें साझा करने की, सो मैंने भी उस घटना को गंभीरतापूर्वक नहीं लिया. हां, इतना जरूर याद है कि कुछ समय बाद अपनी किताबों की वापसी के संबंध में याद दिलाने पर उन्होंने मेरी किताबें ये कहते लौटा दी थीं कि 'भाई साहब, कामकाजी व्यस्तता की वजह से आपकी किताबें पढ़ नहीं पाया.'

बहरहाल, मेरे उनके विचार मिलते-जुलते नहीं थे, उनकी गतिविधियां, प्राथमिकताएं, सहभागिताएं, ज्यादातर अपने संगी-साथियों तक ही सीमित रहतीं थीं. कुछ मुद्दों को लेकर यदा-कदा उनसे बहस भी हो जाती. फिर मुझे यह अहसास भी था कि उनकी ये गतिविधियां, कवायदें येन-केन-प्रकारेण चर्चा में बने रहने के उद्देश्य से ही थीं. उनके क्रियाकलापों में गंभीरता कम, दिखावा या प्रदर्शन ज्यादा रहता. जाहिर है, मेरी मंजिल, मुद्दे, मकसद, उनसे भिन्न होने के कारण मेरा उन संग निभ पाना संभव नहीं था, सो इन्हीं सब कारणों से मैं उनकी मित्रमंडली से लगभग बाहर ही रहा.

समय बीतने के साथ-साथ स्वाभाविक तौर पर उनकी मित्र मंडली भी शनैः-शनैः बढ़ती रही. बताता चलूं, उनकी मित्र मंडली में ज्यादातर सेवारत, सेवानिवृत्त, विभिन्न पदों पर रह

रहे, रह चुके प्रशासनिक अधिकारी आदि ही थे. कालांतर में उनकी मित्र मंडली में कुछ पुराने, नये जनप्रतिनिधिगण और शहर की नामी-गिरामी हस्तियां, कुछ सेलिब्रिटीज आदि भी शामिल होती गयीं. ऐसा विश्वास के साथ इसलिए भी कह रहा हूं कि वो अपनी मित्रमंडली के साथ जब भी कहीं किसी फंक्शन आदि में होते, बीते दिनों किसी मित्र से मिले होते, परिवार संग पिकनिक पर गये होते या मेट्रो, चिड़ियाघर में, नाव आदि की सवारी किये होते, तो यादगार के लिए हर किसी मौके पर प्राय: उन संग, उनके और अपने पारिवारिक सदस्यों संग ली गयी ढ़ेरों तस्वीरें, सेल्फी आदि सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉर्मस् पर साझा जरूर करते.

कभी-कभी तो ये मित्रमंडली, शहर से दूर किसी रिसोर्ट में देर रात तक पार्टियां आयोजित करते, गप्पें मारते, लेडीज संगीत कार्यक्रम आदि में नाचने-गाने थिरकने के वीडियो क्लिप्स, यहां तक कि अपने बचपन की बातें, तस्वीरें, उनसे जुड़ी धुंधली यादें भी यदा-कदा सोशल मीडिया पर इस तरह साझा करते मानो इनके बीच वर्षों पुरानी गाढ़ी दोस्ती हो.

ऐसा उनके मित्रगण भी करते थे, लेकिन उन संग खींची गयी तस्वीरें, सेल्फी आदि सोशल मीडिया पर पोस्ट करने में सम्यक जी कुछ ज्यादा ही उत्साह दिखाते थे. सम्यक जी आखिर थे तो इंसपेक्टर ही, लेकिन उनकी मित्रमंडली के लोग, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, बड़े अधिकारी या शहर, प्रदेश के गणमान्यजन भी थे. जाहिर है, उन लोगों की पत्नियां और बच्चे भी खुद को उसी अनुसार, बड़ी पदवी वाले या सेलीब्रिटी आदि ही समझते थे.

विगत सात-आठ वर्षों में हुआ ये कि सम्यक जी तो इंस्पेक्टर पद पर ही रह गये लेकिन समय बीतने के साथ-साथ उनकी मित्रमंडली में जो अधिकारी वर्ग से थे, वे सभी अपने-अपने विभागों में पदोन्नति पाते गये. अन्य गणमान्य जन भी अपने अपने क्षेत्रों में तरक्की करते गये. साथ ही उन सभी के बच्चे भी ऊंची कक्षाओं में पहुंचते रहे.

शुरूआती वर्षों में सम्यक जी को ये सब बहुत अच्छा लगता था. सम्यक जी की बच्ची वैशाली ने भी मित्रमंडली के सदस्यों के बच्चों संग ही प्रतिष्ठित स्कूल में पढ़ाई की. साप्ताहिक छुट्टियों में या यदा-कदा किसी कार्यक्रम आदि में जब ये मित्रमंडली आपस में मिलती-जुलती, तो इन सदस्यों के बच्चे भी आपस में हंसते-बोलते-खेलते.

स्कूली दिनों के बाद मित्रमंडली में सभी सदस्यों के बच्चे अपने-अपने माता-पिता की इच्छाओं या अपनी अभिरुचि के अनुसार इंजीनियरिंग, मेडिकल या अन्य स्ट्रीम आदि में करियर बनाने हेतु शहर के प्रतिष्ठित इंस्टीट्यूट में, तो कुछ बच्चों ने उच्च शिक्षा के लिए अन्य शहरों का रुख किया. वैशाली ने शहर के विश्वविद्यालय में बी.ए. में एडमिशन लिया.

चूंकि मित्रमंडली के सदस्यों के ज्यादातर बच्चे अन्य शहरों में रहकर उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहे थे, जिससे अब उनके नये नये मित्र भी बन गये थे. ऐसे में किन्हीं कार्यक्रम आदि में मित्रमंडली के मेल-मिलाप के अवसर पर सम्यक जी की बच्ची वैशाली संग, मित्रमंडली के सदस्यों के बच्चों का रवैया अब वैसा नहीं रह गया, जैसा कि स्कूली दिनों में था. जाहिर है, कुछ सामाजिकतावश या अनजान कारणोंवश, मित्रमंडली के सदस्यों की पत्नियों के तेवर भी सम्यक जी की पत्नी संगीता जी के प्रति बदलती गई.

स्वाभाविक है कि मित्रमंडली के बड़े ओहदे वालों, सेलिब्रिटीज आदि की प्रभुवर्ग की भाषा, उनके बात-व्यवहार से सम्यक जी कभी-कभी असहज भी हो जाते लेकिन पता नहीं किस मोहाविष्ट के चलते वे अपने मान सम्मान की परवाह किये बिना, मित्रमंडली से दूरी बनाये रखने के बजाय उनसे जुड़े रहने के ही हिमायती रहे. हालांकि, बात-चीत में यदाकदा उनके मुंह से इनकी वजहें भी निकल आतीं कि बड़े लोगों से दोस्ती रखने में फायदा-ही-फायदा है. पता नहीं कौन, कब, किस भेष में मददगार साबित हो जाये.

समय बीतते, वक्त बदलते, भला देर कहां लगती है? जिनके साथ सम्यक जी, हंसते मुस्कुराते बोलते-बतियाते, पार्टियां अटेंड करते, तस्वीरें खिंचाते, उन्हें सोशल मीडिया के

विभिन्न प्लेटफॉर्मस् पर साझा करते रहते, अब वो मंजर बदल चुका था.

सम्यक जी को याद है कि अभी लगभग महीनाभर पहले ही उनकी मित्रमंडली के सदस्य परमेश्वरन जी, जो कि पुलिस अधीक्षक हैं, ने अपनी शादी की पच्चीसवीं सालगिरह मनाई, लेकिन उस समारोह में उन्होंने सम्यक जी को आमंत्रित नहीं किया. मित्रमंडली के ही एक अन्य सदस्य आई.ए.एस. अधिकारी तरुण प्रकाश जी ने अपने गृहप्रवेश के मौके पर भी सम्यक जी को नहीं बुलाया. इन कार्यक्रमों की जानकारी उन्हें तब मिली, जब परमेश्वरन जी और तरुण प्रकाश जी ने उन समारोहों की तस्वीरें सोशल मीडिया पर साझा कीं. यद्यपि उन्होंने बुझे मन से उन पोस्ट्स को लाइक करते, मित्रमंडली के सदस्यों को बधाइयां दे दी थीं. प्रत्युत्तर में उन लोगों ने सिर्फ लाइक का ही बटन दबाया था, मानो औपचारिकता निभाई हो. जबकि उनके द्वारा अन्य लोगों को बाकायदे आभार प्रकट करते, धन्यवाद भी ज्ञापित किया गया था.

इन्हीं सब कारणों के मद्देनजर सम्यक जी ने महसूस किया कि इधर कुछ समय से उनकी मित्रमंडली के सदस्यों का व्यवहार, उनके और उनके परिवार के प्रति अभूतपूर्व तरीके परिवर्तित हो गया है. इधर बीच ऐसे ढ़ेरों मौंके आये, जिनमें वे मित्रमंडली के बीच शनैः-शनैः खुद को बेतरह उपेक्षित पाते रहे. इस तरह, सम्यक जी और उनका परिवार अपनी मित्रमंडली के लिए कब अवांछित हो गया वे जान ही नहीं पाये.

बेटी के प्रश्न पर तो उस दिन वो भकुआ कर रह गये. जब सम्यक जी की मित्रमंडली के ही एक सदस्य, मिथिलेश्वर जी, सेवानिवृत्त मजिस्ट्रेट साहब की पोती, ताशी की शादी में वे सपरिवार शामिल हुए थे. उस अवसर पर पूरी मित्र मंडली जमा थी. सभी अपनी-अपनी यादें ताजा करते, उठते बैठते, खाना-खाते, सिंगल और ग्रुप में, विभिन्न एंगल्स से तस्वीरें खींचते-खिंचवाते पार्टी का लुत्फ ले रहे थे. लेकिन पता नहीं क्यों, जब तस्वीरें लेने की बात आती, तो मित्र मंडली के सदस्य, उनकी पत्नियां, यहां तक कि उनके बच्चे भी, सम्यक जी और उनके परिवार से किनारा करते, कतराने लगते. यहां तक कि बहुत आनाकानी के बाद, ताशी ने भी वैशाली के साथ सिर्फ एक या दो फोटो ही खिंचवाया था. ये अलग बात है कि उस अवसर पर यादगार के लिए वैशाली ने ही अपने स्मार्टफोन से दस-बारह फोटो खींचे थे.

हद तो तब हो गयी, जब उनकी मित्रमंडली के कुछ सदस्यों ने इस शादी-पार्टी की तस्वीरें सोशल मीडिया पर साझा कीं. सम्यक जी और उनका परिवार उन तस्वीरों में कहीं भी नहीं दिख रहा था. बच्चों की ग्रुपिंग में एक फोटो ऐसी जरूर दिखी, जिसमें वैशाली बिटिया उपस्थित थी, लेकिन उनकी पत्नी संगीता जी तो किसी भी फोटो में नजर नहीं आईं. सम्यक जी ने ध्यान दिया कि उनके पूरे परिवार को लगभग हर तस्वीर में क्रॉप कर दिया गया था.

मजे की बात यह थी कि उस विवाह समारोह में मैं भी आमंत्रित था. कारण कि मिथिलेश्वर जी विश्वविद्यालयीय दिनों में हॉस्टल में मेरे रूमपार्टनर रह चुके थे. लेकिन, घर में शादी होने के कारण उनकी व्यस्तता और इस मित्रमंडली का सदस्य न होने के कारण मेरे पास वहां उपस्थित लोगों संग बोलने-बतियाने या हास-परिहास के सीमित अवसर ही थे. फिर, अकेले होने की वजह से मेरा वहां मन भी नहीं लग रहा था. ऐसे में, वरवधू को आशीर्वाद देते, नाश्ते के बाद थोड़ी देर तक विवाह कार्यक्रम में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने, वहां उपस्थित लोगों की गतिविधियों से दोचार होने के उपरांत मैं अपने घर लौट आया था.

खैर, वो कहते हैं न कि मुंह से बड़ा कौर उठाने, चादर से बाहर पांव फैलाने की अपनी जगजाहिर दिक्कतें तो हैं ही, फिर जैसा हम सोचते हैं, वैसा हमेशा होता भी कहां है? बात बस इतनी सी है. देखा जाय तो इस बिंदु पर आकर, ये कहानी खत्म हो जानी चाहिए, लेकिन सम्यक जी को कौन समझाये? ■

हू केयर्स ?

रोहित कुमार हैप्पी

अगस्त का महीना विदेश में बसे भारतीयों के लिए बड़ा व्यस्त समय होता है. कम से कम हमारे यहां तो ऐसा ही होता है. स्वतंत्रता दिवस की तैयारी पूरे जोरों पर रहती है. अनेक संस्थाएं स्वतंत्रता दिवस का आयोजन करती हैं. नहीं, मैं गलत लिख गया. दरअसल, स्वतंत्रता दिवस नहीं, 'इंडिपेंडेंस डे'. स्वतंत्रता दिवस तो न कहीं सुनने को मिलता है न कहीं पढ़ने को. मुझे तल्ख़ी आई तो साथ वाले ने वेदवाणी उवाची, 'हू केयर्स?' यही तो कठिनाई है कि आप 'केयर' ही तो नहीं करते और करते भी हैं तो जब आप पर आन पड़े, तभी करते हैं.

अगस्त मास के सभी सप्ताहांत में यही चलता है. कभी यहां आयोजन तो कभी वहां आयोजन. मुझे अपने स्कूल के दिन याद आ जाते हैं. शहर भर के स्कूलों में 15 अगस्त के आयोजन हुआ करते थे परंतु हम सब आयोजनों का आनंद नहीं उठा पाते थे क्योंकि सब आयोजन एक ही दिन यानी 15 अगस्त को और लगभग एक ही समय में होते थे लेकिन जब से यहां न्यूज़ीलैंड में आ बसे तो यही बात खटकती थी कि ढंग से स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस भी नहीं मनाया जाता. शहर के महात्मा गांधी सेंटर में स्वतंत्रता दिवस ज़रूर गुजराती स्टाइल से आयोजित किया जाता था. सब कुछ गुजराती में होता था. झंडा शाम को लहराया जाता था. उनकी भावना में कदाचित कोई खोट नहीं था. इंगित किया गया तो झट से भूल सुधार हो गई. भूलें होती हैं और सुधारी भी जा सकती हैं बशर्ते न भूल करने वाला दुर्भावना ग्रस्त हो और न इंगित करने वाला.

दोनों में से एक के मन में भी खोट हो तो सकारात्मक परिणाम की आशा नहीं.

अधिकतर गुजरात और पंजाब दो ही राज्यों के लोग यहां (न्यूज़ीलैंड में) बसे हुए थे. फिर धीरे-धीरे अनेक राज्यों के भारतीय यहां आ बसे. अब शुरु हुआ विभिन्न स्वतंत्रता दिवस आयोजनों का सिलसिला. विदेश में रहकर भी देसी लटके-झटकों का सिलसिला. राजनीतिक उठापटक और जोड़-तोड़ की राजनीति का सिलसिला.

हिंदी और बिंदी दोनों कोने में बैठी सिसक रही हैं. 'भारत माता' कब की 'मदरइंडिया' हो चुकी है. सब कुछ 'बॉलीवुडमय' हो गया है. जय बॉलीवुड.

इधर स्वयंभू भारतीय नेता लड़ रहे हैं, उधर जनता की मौज लगी है. एक दिन के मेले की जगह पूरा महीना मेलों का मजा लूटो. टिक्की, छोले-भटूरे, मसाला चाय और डोसा का आनंद उठाओ.

अपने स्वयंभू लीडर इसे, 'इंडिपेंडेंस एनवर्सरी' ही कहेंगे. ऐसा नहीं है कि उन्हें हिंदी नहीं आती या वह कोई अंग्रेज़ी

विश्वविद्यालय की पैदाइश हैं. हिंदी उपयोग न करने से एक तो आप की शान बढ़ती है, दूसरे यदि आप को संसद में जाने का भूत चढ़ा हो तो हिंदी न बोलकर आप अन्य भारतीयों के चहेते भी बन सकते हैं. ये कारण न हों तो फिर एक अन्य कारण भी है, अभी सत्तर-बहत्तर साल ही तो हुए हैं हमें आज़ाद हुए, अंग्रेजी बोलिए, चाहे गलत बोलिए, बस.

अपने यहां कई पत्र, रेडियो और टी.वी. चल रहे हैं. दुकानदार पत्र, रेडियो और टीवी चला रहे हैं और लेखक व पत्रकार दुकान चलाने की सोच रहे हैं. अच्छी भीड़ जुटी है. सुना है मुफ़्त पित्ज़ा बंट रहा है. कुछ अपने साथ-साथ अपने बाकी घर वालों के लिए भी पित्ज़ा संभाले हुए हैं. उनके पास तीन-चार पैक हैं. एक महिला कुछ ढूंढ रही हैं. मैं सोचता हूं इनका शायद कुछ गुम गया है. पूछता हूं. 'क्या ढूंढ रही हैं?' वे पूछती हैं. 'यह मुफ़्त पित्ज़ा कहां मिल रहा है?' मैं ऊपर वाले तल की ओर उंगली कर देता हूं.

बाहर एक दुकानदार ने कुछ बच्चों को बालसेवा दे रखी है. पर्चे बांट रहे हैं, 'स्वतंत्रता दिवस स्पेशल. बादाम साढ़े बारह डालर किलो.

अंदर कुछ बच्चे अपना कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे हैं. इस समूह का सबसे दुबला-पतला लड़का बिस्मिल अज़ीमाबादी की 'वीररस' की पंक्तियां 'सरफ़रोशी की तमन्ना' जिन्हें कभी रामप्रसाद बिस्मिल सरीखे हट्टे-कट्टे क्रान्तिकारी ने स्वतंत्रता आंदोलन में देशभर में मशहूर कर दिया था, बोल रहा था. थकी सी, धीमी आवाज वाला यह लड़का इन पंक्तियों पर अपना पूरा जोर लगाए हुए था. मुझे डर लगा कहीं यह ज्यादा जोर लगाकर यहां मूर्छित न हो जाए. अब यहां विदेश में मैं हनुमान जी को कहां ढूंढता फिरूंगा कि संजीवन बूटी दिला दो. लड़का बोलते-बोलते भूल गया तो जेब में रखी पर्ची काम आ गई.

लड़के ने वीररस पूरा कह सुनाया तो मुझे राहत हुई. दिल किया कि इसकी माताजी से कहूं, इसकी बलाइयां ले लें. कितना बहादुर लड़का है. फिर दिल ने कहा इसकी हौसला अफ़ज़ाई करो, इसे एक किलो बादाम दिलवा दो. दिमाग ने कहा, 'रहने दो, इसे तो 250 ग्राम ही काफ़ी हैं.' बादाम अच्छे रहेंगे. पित्ज़ा बांटने की जगह इन्हें बादाम ही बांटने चाहिए थे.

उधर कुछ बतिया रहे हैं, 'चलें क्या?'

'अरे बस एक बार प्रधानमंत्री को आने दो. उसके साथ फोटो खिंचवाने के तुरंत बाद चल देंगे.'

उधर प्रधानमंत्री का प्रवेश होता है. कुछ लोग प्रधानमंत्री के साथ फोटो खिंचवाने की जुगत भिड़ाने में लग जाते हैं. कुछ भारतीय वृद्ध भी आये हुए हैं. कुछ लाठी के सहारे, तो कुछ व्हील चेयर पर. उनके बच्चे शायद आगे जा चुके हैं या पीछे कहीं फोटो खिंचवाने लग गए होंगे.

जब से हमारे भारतीय मूल के एक-दो सांसद बने हैं तब से कई छुट्टभइये भी संसद की राह की जुगत में हैं. तरह-तरह के काम कर रहे हैं पर 'फल' है कि हाथ लगने में ही नहीं आ रहा और किसी-किसी को तो शिकायत है, 'काम हम करते हैं और फल वे खा जाते हैं.' क्या करें, शायद इसी का नाम किस्मत है. फिर भी बेचारे मुन्ना भाई वाली तर्ज पर लगे ही हुए है कि हम होंगे कामयाब एक दिन.

'हू केयर्स?' चलता है तो चलने दो. तुम क्यों कुढ़ रहे हो? जवाब है, अगर आप दुकानदार हैं तो यह भी समझ लें कि जवाब भी वज़नदार है, आपके इस, 'हू केयर्स का.' इस वक्त जब आप अपनी दुकान या कामधंधे में लगे हुए हैं उस समय मैं यह लेखन कर रहा हूं क्योंकि, 'आई डू केयर'. इसका आप पर कोई असर होगा कि नहीं पता नहीं, 'हू केयर्स?'

हमारे प्रधानमंत्री (न्यूज़ीलैंड के प्रधानमंत्री) भी बहुत व्यस्त हैं, इन दिनों. उन्हें भी सब आयोजनों में जाना पड़ेगा. अपने स्वयंभू नेता कोई भी धंधा करें, घाटा नहीं खाते. अपना 'इंडिपेंडेंस डे' भी छुट्टी वाले दिन ही मनाते हैं अन्यथा काम-धंधे का नुकसान और भीड़ भी कैसे जुटे? हां, अपना धंधा बराबर चलना चाहिए. पापी पेट का सवाल है.

बेचारे प्रधानमंत्री! उन्हें छुट्टी वाले दिन भी काम करना पड़ता है. 'ओवर टाइम!' क्या करें, पापी वोट का सवाल है. हां, सो तो है. 'हू केयर्स.' ■

गढ़पहरा

कुमार रूपेश

सागर (म. प्र.) की पुरातात्विक विरासत में गढ़पहरा का नाम प्रमुखता से लिया जाता है. झांसी, ललितपुर के रास्ते से सागर में प्रवेश करने पर पहली मुलाकात गढ़पहरा से ही होती है. ऊंची पहाड़ी पर नगर के प्रवेश द्वार पर बना होने से इसकी स्थिति नगर पहरेदार जैसी ही है.

इसकी प्राचीनता गोंड़ राजा संग्रामशाह के समय की मानी जाती है. उस समय गढ़पहरा गोंडवाने का ही एक गढ़ था जिसमें 360 मौजे थे. बाद में कहा जाता है कि इस भाग को डांगी राजपूतों ने जीत कर अपने राज्य में मिला लिया था. इसे पुराना सागर भी कहा जाता है. यह डांगी राज्य की राजधानी रही है. इन डांगी राजाओं को नरवर के कछवाहा राजपूतों का वंशज माना जाता है. गढ़पहरा शासकों में पृथ्वीपत, महाराज कुमार और मानसिंह के नाम ही ज्ञात हो सके हैं.

पृथ्वीपत सन 1689 ई. में मुगल शासन के जागीरदार के रूप में गढ़पहरा का शासक रहा. उसे लोकपरंपरा में कमजोर बुद्धि के लंपट व्यक्ति के रूप में आज भी याद किया जाता है. कहा जाता है कि गढ़पहरा के अपने महल की छत से चंद्रमा पर तीर चलाकर वह अपना स्वयं मनोरंजन किया करता था. ये भी कहा जाता है कि वह प्रत्येक वधू को उसकी प्रथम रात अपने साथ बिताने के लिए बाध्य करता था.

राजा पृथ्वीपत को छत्रसाल के पुत्र ने अधिकारच्युत कर सागर स्थित परकोटा में रहने की अनुमति दी थी जहां कुछ वर्षों तक वह रहा. सन 1727 ई. में अम्बर के राजा सवाई जयसिंह ने उसे उसकी खोई हुई पैतृक जागीर दिलाने में मदद की.

डांगी सरदार सन 1732 ई. तक परकोटा में रहा. इसी बीच उसके धोखेबाज़ अधिकारियों ने उसकी जागीर कुरवाई के नवाब दलपत खान को दे दी. बाद में इसे मराठों ने अपने अधिपत्य में लिया.

गढ़पहरा में अब भी कुछ ऐतिहासिक अवशेष हैं. कम ऊंचाई पर निर्मित इस किले पर एक सड़क के माध्यम से पहुंचा जा सकता है. इसका प्रवेश द्वार परिष्कृत है और चबूतरे पर एक मंदिर है.

यहां डांगी राजाओं के शीशमहल नाम से ग्रीष्म आवास के अवशेष भी मौजूद हैं. गढ़पहरा में यह कथा भी प्रचिलित है कि एक नटनी ने राजा को इतना प्रसन्न किया और वचन ले लिया कि आसपास की दो पहाड़ियों के बीच की खाई में रस्सी पर वह आर-पार चल सके तो उसे आधा राज्य दे दिया जाएगा. नटनी पहाड़ी के दूसरे छोर पर पहुंचती उससे पहिले ही रानी ने ईर्ष्या के कारण रस्सी कटवा दी परिणामस्वरूप नटिनी पहाड़ियों के बीच गिर कर मर गई. यहां पहाड़ी पर एक छोटा ताल भी है जिसे मोती ताल कहा जाता है. ■

धर्मपाल महेंद्र जैन

(1)

इक्कीसवीं सदी का ईश्वर

बहुत बदल गया ईश्वर दो हजार बीस से,
कई नामों से याद करते रहे अरबों लोग
हर क्षण के साथ
दुनिया के हर कोने में
तमाम भाषाओं में कितने ही मंत्र
झूठे पड़ गए
बीच रास्ते ही मर गईं प्रार्थनाएं.

नहीं खुले अधिकतर आस्था घरों के पट
कुछ खुले भी तो
ईश्वर को छूना निषिद्ध था वहां
घंटियां टकारने के लिए जो हाथ उठे
सिमट गए किसी अवांछित डर से.

न दीप जले
न जलते दुख का धुआं उठा
तमाम कोशिशों के बावजूद
जो लोग बॉडी बैग में भर दिए गए
ईश्वर उनके पास भी नहीं आ पाया,
दो हजार इक्कीस, दो हजार बाईस
समय नहीं थमा एक पल भी
पलटकर देखने के लिए
लगा ईश्वर की कोई भूमिका नहीं रही
हमारे समय में. ■

(2)

प्रश्नवाचक समय

मैं समय हूं
तिकड़मों का समय
टूटे संवाद का समय
चुप्पी का समय
या फिर जुल्म से जन्मी
जय-जयकार का समय
पर मैं समय हूं.

चीख़-चिल्लाहटों का समय
लूटपाट का समय
मरने-मारने का समय
गुंडागर्दी-धोखेबाजी का समय
या फिर बुलडोजर का समय
पर मैं समय हूं.

मुग़ालते का समय
छल-कपट का समय
अंधी वैचारिकता का समय
संकीर्णता का समय
या फिर असहमति का समय
मैं समय हूं.
प्रश्नवाचक समय. ■

पंजाबी कविता- सरबजीत कौर 'जस'

हिंदी अनुवाद- प्रदीप सिंह(हिसार)

आत्मस्वीकृति

जो मैं पीतल हूं
तो
सोना होने का ढोंग नहीं रचाऊंगी.

दागी हूं
तो
उजले चेहरों के घमंडी आईनों में
मार-मार टक्कर
अपने
आत्मविश्वास की
चोंच नहीं तुड़वाऊंगी.

पानी हूं
तो
दूध से
बेवजह बहस में न पड़कर
अपनी
तरलता का जश्न मनाऊंगी.

अगर मेरे पास नहीं है
नौकरशाही वाला चश्मा
तो
मैं टिस-टिस करते ज़ख्मों को
लहूलुहान ख़्वाबों को
ग्रहण-ग्रसित सुबह को
नंगी नज़र ही निहारूंगी.

मेरे कानों को
नहीं भाती
जो 'नीरो' की बंसी
तो
मैं चाहों की चीत्कार को
सच के बजते श्वास को
मन के रोने- पीटने को
दोनों
कान खड़े कर सुनूंगी.

मेरी जुबान में नहीं
अगर
मन की बात कहने का हुनर
तो
मैं जन की दर्द भरी आवाज को
छोटी बच्चियों की सिसकियों को
पृथ्वी की हर डरावनी आहट को
कविता में
अनुवादित करके लिखूंगी.

मुझे
अगर नहीं आता
आपके अनुसार अच्छा-
देखना
सुनना
बोलना
तो
मैं खुद के मुताबिक
देखूंगी भी
बोलूंगी भी

सुनूंगी भी.
मैं
मनुष्य की पैदाईश
भोला बंदर बनने से इनकार करती हूं. ■

ममता पंडित

1.

पलायन

गौतम की तपस्या पर,कोई संशय नहीं
लेकिन सोचती हूं
उस दिन,सिद्धार्थ की जगह
गर यशोधरा उठ कर चल देती कहीं,
तो क्या होता उसका भाग्य
क्या मिल पाता उसे, बुद्ध सा वैराग्य?
एक दिन ऐसा हो,
संसार की सारी स्त्रियां चुन लें
मोक्ष की राह
वे भी लेना चाहती हों,
जिम्मेदारियों से दूर
किसी एकांत की थाह.
तो क्या उस एक दिन,
चल पाएगा संसार का काम-काज?
जिसकी कल्पना मात्र से, सिहर उठे हो,
उस वास्तविकता का क्या अंदाज़?
सच्चाई यह है कि
विरक्ति औ संन्यास
एक आसान पलायन है,
असली चुनौती
इस दुनिया में जीवन यापन है. ■

2.

महिला सीट

हमारे निर्वाचन क्षेत्र में
इस बार महिला सीट थी,
महिला सशक्तिकरण के नाम पर,
यह राजनीतिक चाल हिट थी.

सभी नेताओं की,
धर्म पत्नियां
अब इस दौड़ का हिस्सा थीं
सर पर पल्लू से लेकर,
अभिवादन और कृत्रिम मुस्कान
सब उनकी ट्रेनिंग का हिस्सा थी.
बस थोड़ी सी मेहनत कर लो,
घर बार सब मैं संभालूं,
किसी तरह मेरी कुर्सी बचा लूं,
कम से कम इतनी मोहलत मिले,
जो डकार गया उसे पचा लूं.
नेताजी मिसेज को मना रहे थे,
रोज़ नए-नए तोहफे ला रहे थे.
वो बेचारे महिला सीट समस्या से घिरे थे,
उनकी मिसेज खुश थीं,
बड़े दिनों बाद उनके दिन फिरे थे.

नेताजी कहते रहे
फिर बाद में तो,
सब अपने हाथ है,
पक्ष-विपक्ष से लेकर व्यवस्था
सब अपने साथ है
शपथ से लेकर संस्था तक
सब मुझे चलाना है,
तुम्हें बस
जहां मैं कहूं
अंगूठा लगाना है.
पत्नी ने हमेशा की तरह,
हां जी कह सर हिलाया,
ये कौन सी बड़ी बात है
हमने इतने बरस घर चलाया,
ये तीर भी निशाने पर लगा,
नेताजी का हर विरोधी ठिकाने लगा
पत्नी जब भारी मतों से विजयी हुईं
नेताजी को कोई अजीब डर सताने लगा.
चुनाव खत्म होते ही,
धर्मपत्नी की घर वापसी हुई
काग़ज़ पर जो रानी थी
वो फिर उस दर की दासी हुई. ■

राजेश पाठक

1.

गांव

गांव चाहता है
बची रहे संवेदना
बचा रहे भोलापन व अपनापन भी.
बची रहे पुरखों की विरासत
बचे रहें दो जोड़े बैल और
बची रहे कुछ धुर ही सही
पर उपजाऊ जमीन.
गांव नहीं चाहता
पूरा का पूरा शहर बनना
कि उसकी उपजाऊ जमीन पर
उगने लगें मकान की फसलें.
वह चाहता है
बची रहें संवेदनशील नस्लें.
गांव को पूरा का पूरा
शहर बनाने की कवायद
ठीक वैसे ही
जैसे कोई मां-बाप
थोप जाते हैं
अपने बच्चों के माथे पर
अपनी महत्वाकांक्षाओं के बोझ
बिना उनकी
क्षमता, रूचि व प्रकृति को जाने. ■

2.

मिट्टी

पेट के सवाल को
रोटी से हल करते-करते
गांव से शहर में
बसता चला गया आदमी.
छोड़ दिया गांव में बसा
भरा-पूरा परिवार

छोड़ा तो छोड़ा
थोड़ा भी लगाव
नहीं रख सका मिट्टी से
कि जब चलता था
तो उसके पांवों में
लगी मिट्टी पूरी की पूरी
नहीं हट पाती थी
उतनी भी आसानी से
लाख धोता था
पानी से.
अब तो शहरी संस्कृति में
इतना घुल गया कि
पांवों में थोड़ी धूल
लगी भी नहीं
कि झाड़ देता है उसे
जैसे गांव से शहर आये
किसी रिश्तेदार से
मुंह मोड़ लेता है
असभ्य समझ कर.
और इस तरह धीरे-धीरे
मिट्टी गांव की हो
या शहर की
उससे पाता रहता है छुटकारा

पर यह भी कि
एक दिन नजर आ ही जाते हैं
शहर में बनाए गए
नये मकान के अंदर
दीवारों की पोर में
उग आए छोटे-छोटे
पीपल, बरगद के पौधे.
उन्हें नोच-उखाड़
फेंकने के बावजूद
वे लगातार उग आ रहे हैं
उन्हें अपनी मिट्टी की गंध
पता है
और उन्हें
मिट्टी से जुड़े
व उसके साथ
उगे रहना पसंद है. ■

चरणसिंह अमी

(1)

साथ हमारे दुःख रहेगा

मिलेंगे तो दुःख कटेगा
कुछ अपनी कहेंगे
कुछ दुःख कहेगा.

बरसों बीत गए
हम-तुम रीत गए
बाकी जो बचा है
उसे दुःख जियेगा.

यूं तो दिन कट जाते हैं
लोग भी छंट जाते हैं
साथ चलने वालों के
किस्से दुःख सुनेगा.

कुछ लोग बड़े ज़हीन हैं
जिंदगी के रेशे बड़े महीन हैं
कुछ टूट गए हैं, जो बचे हैं
उनसे जिंदगी दुःख बुनेगा.

छोड़ जाओ साथ
मिलना बरसों बाद
हम अकेले नहीं रहेंगे
साथ हमारे दुःख रहेगा. ■

(2)

मित्र, जाओ तो बताना

मित्र, जाओ तो बताना
कुछ चीजें ले जाना साथ.
अपने साथ
थोड़ी-सी मिट्टी
थोडी-सी रेत
थोडा-सा बादल लेते जाना,
मिट्टी पृथ्वी के फैलाव की याद दिलाएगी
रेत नदी की गहराई की
और बादल आसमान की ऊंचाई.
लेते जाना थोडा-सा पानी
तुम्हें आबदार बनाए रखेगा.
कुछ किताबें मत भूलना
वे तुम्हारे भीतर आदमी जिंदा रखेंगी.
थोडे-से शब्द रख लेना
ताकि संवाद की गुंजाइश बनी रहेगी.
थोडी-सी ध्वनि भी
एकांत में बतियाने के लिए.
थोडी-सी आग ले जाना
संघर्ष के दिनों में मशाल जलाने के लिए.
थोडी-सी पत्तियां
ताकि जंगल का संगीत सुन पाओ.
थोडी-सी जड़ भी
विस्थापन का दर्द महसूसने के लिए.
और मित्र,
थोडा-सा खुद को ले जाना मत भूलना
यह तुम्हारी आत्मा को जगाएगा
झिंझोड़ेगा तुम्हें
जब भी अंतरात्मा की आवाज कुचलोगे. ■

फ़ानी जोधपुरी की ग़ज़लें

1.

दर्द जब आख़िरी पड़ाव में था.
मैं नए ग़म के मोल-भाव में था.
नींद कमबख़्त फिर वहीं टूटी,
ख़्वाब का शहर जब बसाव में था.
उसकी आंखों से अश्क बहते थे,
मेरा सब कुछ उसी बहाव में था.
कैसे दुनिया को फिर नज़र आता
घाव तो मेरे दिल के घाव में था.
क्या ख़बर किसको हाथ सेंकने थे
आज पूरा नगर अलाव में था.
हाथ पा कर मेरी समाअत का,
झील का सारा शोर नाव में था.
चुलबुलापन, शरारतें, शोख़ी
'फ़ानी' क्या-क्या तेरे सुभाव में था. ■

2.

कहीं चलन भी नहीं था उदास रहने का.
जब हमने सीखा सलीक़ा उदास रहने का.
उदासियों ने किसी से न फिर रखी उम्मीद,
उठाया हमने जो ज़िम्मा उदास रहने का.
ये खिलखिलाते हुए कान रो पड़ें शायद,
बहुत उदास है क़िस्सा उदास रहने का.
सियाह रात का, माहौल का, फ़ज़ाओं का,
अलग-अलग था नज़रिया उदास रहने का.
थका दिया है बहुत बरकतों ने ख़ुशियों की,
सिखा दे कोई तरीक़ा उदास रहने का.
निकल गया है कोई हाथ की लकीरों से,
सबब ये हाथ में आया उदास रहने का.
उदासियां कहीं मकरूह तो नहीं 'फ़ानी',
किसी का दिल नहीं करता उदास रहने का. ■

3.

धड़कनों में बसा है सन्नाटा.
मेरा हिस्सा बना है सन्नाटा.
काम अल्फ़ाज़ जो न कर पाए,
काम वो कर गया है सन्नाटा.
शोर जब छू लिया तो इल्म हुआ,
कितना ऊंचा हुआ है सन्नाटा.
जिस्म तक छोड़ना पड़ा मुझको
कितना महंगा पड़ा है सन्नाटा.
रौनकों देखो अब डराएगा,
बाल खोले खड़ा है सन्नाटा.
गश्त क्यों कर रही हैं आवाज़ें,
आज क्या सो गया है सन्नाटा.
मेरे अंदर उतर के बतलाओ,
अब भी कुछ बोलता है सन्नाटा.
एक दिन तो ज़रूर नापूंगा,
शोर है या बड़ा है सन्नाटा.
इक महाजन सा 'फ़ानी' के पीछे,
हाथ धो के पड़ा है सन्नाटा. ■

4.

बना के साज़ पे सरगम बना दिए गए तुम.
बराए अज़्मते-आलम बना दिए गए तुम.
बनाएगा वो हमें ,वो हमें बनाएगा,
ये सोचते ही रहे हम बना दिए गए तुम.
सुकूत,दर्द,कसक,इज़्तिराब,सन्नाटा,
ये सिलसिला जो गया थम बना दिए गए तुम.
बहोत से लोग थे तश्कील की क़तारों में,
वो देखते रहे,ताहम बना दिए गए तुम.
तुम ही तो थे जिसे हर मर्तबा बनाया गया,
कभी ज़ियादह कभी कम बना दिए गए तुम.
ज़रा भी ख़ुश्क बनाते तो तुम चटख़ जाते,
इसी लिहाज़ से कुछ नम बना दिए गए तुम.
हर एक आरज़ी शै को फ़रेब दे-दे कर,
बड़े सलीक़े से मोहकम बना दिए गए तुम.
किसी फ़क़ीर ने 'फ़ानी' के वास्ते लिक्खा,
बराए गिरिया-ओ-मातम बना दिए गए तुम. ■

शकील आज़मी की ग़ज़लें

(1)

उन्हीं की आंखों में आंसू थे बेज़बान थे जो.
वो ज़ख़्म गहरे ज़ियादा थे बेनिशान थे जो.
जो घर से निकले उन्हें ज़िंदगी का फ़न आया,
वो बेहुनर थे किताबों के दरमियान थे जो.
परों पे अब के नहीं हौसलों पे हमला था,
उड़े न फिर वो परिंदे लहू-लोहान थे जो.
ख़ज़ाने क्या हुए गाड़े थे जो बुज़ुर्गों ने,
कहां चले गए मिट्टी में आसमान थे जो.
कटे पड़े थे क़तारो में सायादार दरख़्त,
गिरा दिए गए रस्ते में सायबान थे जो.
बड़ी तवील थी परवाज़ हम परिंदों की,
गुबार हो गए आंखों में आसमान थे जो.
कोई बचा नहीं पानी को रोकने वाला,
नदी में बह गए साहिल के पासबान थे जो. ■

(2)

मेरी बुनियाद को तामीर से पहचाना जाए.
मुझको उजलत नहीं ताख़ीर से पहचाना जाए.
मैं कई शक्ल में रहता हूं बदन पर अपने,
मेरा चेहरा मेरी तहरीर से पहचाना जाए.
मैंने पानी के लिए रेत उड़ाई है बहोत,
मेरी तक़दीर को तदबीर से पहचाना जाए.
मेरे कांधे से उतारे न कोई मेरी सलीब,
जुर्म मेरा मेरी ताज़ीर से पहचाना जाए.
मेरा सब कुछ मेरे माज़ी के हवाले से है,
मेरे मंगल को मेरे पीर से पहचाना जाए. ■

(3)

कहीं दादी कहीं नानी से अलग कर दिए गए.
बच्चे परियों की कहानी से अलग कर दिए गए.
कच्ची उम्रों में हमें काम पर लगा दिया गया,
हम वो बच्चे जो जवानी से अलग कर दिए गए.
पहले दुनिया ने सिखाया हमें तैराकी का फ़न,
तैरना आया तो पानी से अलग कर दिए गए.
जंग लड़ने के लिए सीन में लाए गए हम,
अम्न होते ही कहानी से अलग कर दिए गए.
हम वो अल्फ़ाज़ जिन्हें ठीक से समझा न गया,
जब भी लिक्खे गए मानी से अलग कर दिए गए. ■

(4)

जब तलक इश्क़ में पागल न हुआ.
मैं अधूरा था मुकम्मल न हुआ.
मिट गए उसके निशां राहों से,
वो मगर आंख से ओझल न हुआ.
उसका रिश्ता था मेरी प्यास के साथ,
जो मेरी धूप में बादल न हुआ.
वो धुआं बन के फिरा आवारा,
जो तेरी आंख का काजल न हुआ.
बिक गए दाम घटाकर कुछ लोग,
और मैं सोने से पीतल ना हुआ. ■

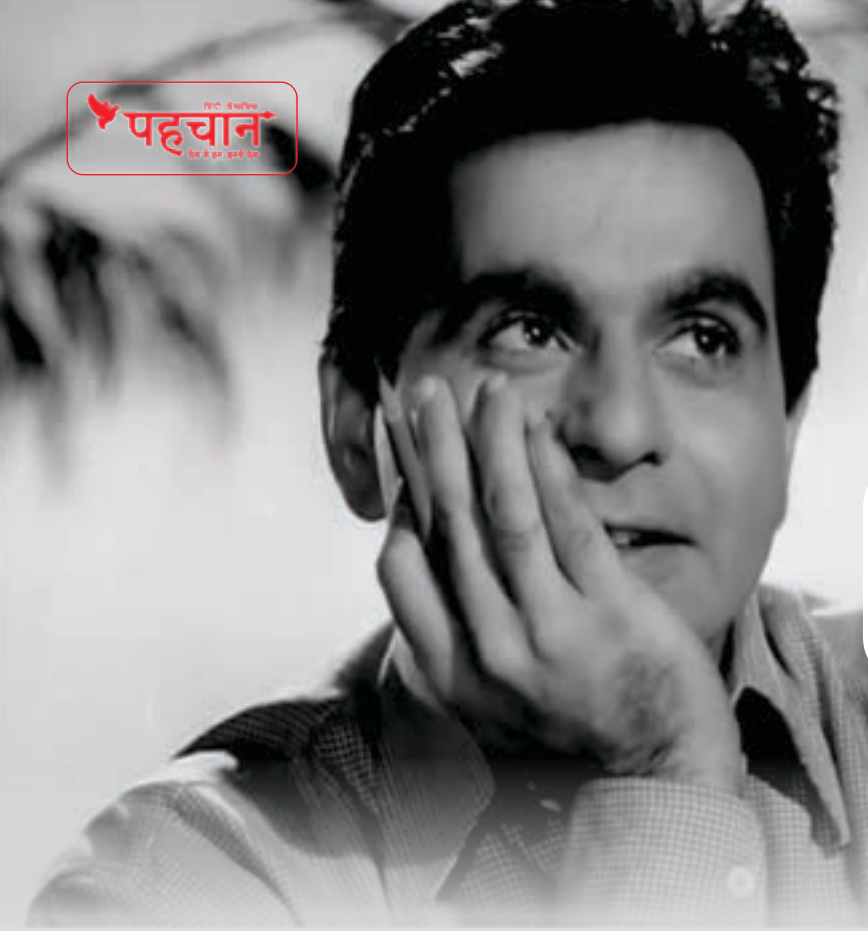

ट्रेजडी किंग दिलीप कुमार

डॉ. भूपेंद्र बिष्ट

आखिर 7 जुलाई 2021 को साहिब-ए-आलम दिलीप कुमार भी चले गए. दादा साहब फाल्के और निशान-ए-इम्तियाज़ से नवाजे गए, सबके महबूब सितारे दिलीप कुमार.

नैनीताल में उन दिनों सर्दियों के मौसम में एक ही सिनेमा हॉल खुला रहता ('कैपिटल' और 'अशोक', दो ही थे तब.) और उस मौसम भर उसमें पुरानी ही फिल्म दिखाई जाती. हम कुछ किशोर वय जनों का चुपचुपाते फ़िल्म देख आना शगल और लत के बीच का सा कुछ बन गया था. दिलीप साहब की कोई फिल्म, जो पहली बार मैंने देखी, 'आजाद' (1955 में रिलीज) थी. एक कॉमेडी ड्रामा, ओम प्रकाश कांस्टेबल की हरकतों पर खिल-खिलाए तो खूब हॉल में हम पर शो छूटने के बाद बाहर लगातार हो रही बर्फबारी से सारी हंसी काफूर.

फिर नैनीताल और दिलीप साहब. 'मधुमती' (58) फिल्म का गाना 'सुहाना सफर और ये मौसम हंसी', पर्दे पर घोड़ाखाल का चीड़ जंगल और भूमियाधार की हसीन वादियां. फिल्म यद्यपि श्याम श्वेत (B & W) है पर इन दिलकश नजारों ने यहां हिंदी फिल्मों के छायांकन के लिए रास्ते से खोल दिए. इसमें गुमराह 63, वक्त 65, अनीता 65, कटी पतंग 83, और कोई मिल गया 2003 को प्रमुखता से याद किया जा सकता है.

जो कोहिनूर चला गया, कैसा था उनका जिंदगी के प्रति नजरिया, फलसफा. कितना बड़ा कद रहा उनका. क्या मानी थे इंसानियत के उनके लिए, हर दिल अज़ीज़ यूसुफ साहब के सरोकार क्या थे, क्या समझते थे वो आर्ट को. ये सब बातें उदय तारा नायर की किताब The Substance and the Shadow, जो दिलीप साहब की आत्मकथा है, में तफसील से मिल जाएंगी और अब तो इसका हिंदी तर्जुमा 'वजूद और परछाई' (वाणी प्रकाशन) भी दस्तयाब है, प्रभात रंजन का बखूबी किया हुआ. साथ ही पाकिस्तान के सीनियर जर्नलिस्ट सईद अहमद की किताब 'दिलीप कुमार:अहद नामा-ए-मोहब्बत' भी देखी जानी चाहिए.

यतींद्र मिश्र याद दिलाते हैं कि दिलीप साहब ने एक इंटरव्यू में कहा था कि वे बॉम्बे टॉकीज में अशोक भैया को अभिनय करते हुए देखते रहते थे और उनकी बताई बातें मेरे लिए रास्ता बन गईं और बात यह थी कि अभिनय न करना ही दरअसल 'असल अभिनय' है और इसी रास्ते पर चल कर

दिलीप साहब ने एक्टिंग के नए मेयार तैयार कर दिए.

इसी तरह सलीम खान के दिलीप कुमार पर लिखे एक लेख के जरिए पता चलता है कि दिलीप साहब के बोलने के अंदाज में दो लाइनों के बीच में जान बूझकर लंबी चुप्पी (pause) दर्शकों/ सुनने वालों पर गहरा प्रभाव छोड़ती थी और यह असर उन पर नेहरू जी के भाषणों का था, जो सोचते तो थे अंग्रेजी में पर बोलते हिंदुस्तानी में थे. इस किस्म के बारीक नुस्खों को अदाकारी में उभार कर लाना

दिलीप कुमार ही मुमकिन कर सके और एक प्रकार से हिंदुस्तानी जुबान को स्थापित करने तथा मोहक बनाने में दिलीप साहब के काम को भी याद रखा जाएगा.

2015 में जब दिलीप कुमार और अमिताभ बच्चन को एक साथ पद्मविभूषण देने की घोषणा हुई तो विष्णु खरे जी ने एकदम सही बिंदु से बात शुरू की कि Comparisons are Odious. उन्होंने लिखा अमिताभ अभिनय के सचिन तेंदुलकर हैं तो दिलीप साहब सर डॉन ब्रैडमैन. दिलीप कुमार को तो एक 'मिस्टिक' कहा जा सकता है, वे एक मुअम्मा जैसे हैं, एक तिलिस्म की मानिंद.

हल्द्वानीअल्मोड़ा वाया ज्योलिकोट रोड पर एक बहुत कम आबादी वाला गांव 'गेठिया' पड़ता है, जहां क्षय रोग के ब्रिटिश कालीन सेनेटोरियम की पूरक इकाई है. बताते हैं 'मधुमती' फिल्म का बेहद मकबूल गीत 'चढ़ गयो पापी बिछुआ' गेठिया से सटे हुए ढलान और जंगल में शूट किया जा रहा था और नायिका बैजंती माला को एक दृश्य में लकड़ी का गट्ठर सिर पर लिए दौड़ना था, जो मुकम्मल नहीं हो पा रहा था. तब यहीं की एक महिला जशोदा देवी ने उस सीन विशेष के लिए बॉडीडबल का काम किया. (तीन वर्ष पूर्व उस शिक्षिका जशोदा का निधन हो गया है).

दिलीप साहब लोक और नैसर्गिक उत्स को कितनी अहमियत देते थे, इसका अंदाजा हमें कुमाऊं के ख्यातिलब्ध रंगकर्मी मोहन उप्रेती की किताब 'कुछ मीठी यादें कुछ तीती' के पन्ने पलटने से भी होता है. कहा गया है 'मधुमती' में बैजंती माला के गले में चांदी की हंसुली, पांव में चांदी के धागुले सरीखे आंचलिक जेवर और पहनावे में पहाड़ी घाघरा व आंगड़ी दिलीप साहब की ही तजवीज पर फिल्म निर्देशक विमल रॉय को भा गए. रंगकर्मी नईमा खान उप्रेती के हवाले से यह भी सामने आता है कि कुमाऊंनी लोक गीतों की महक सलिल चौधरी के कई गीतों में है और पहाड़ के घसियारी नृत्य को प्रसिद्धि भी 'मधुमती' से ही मिली.

वास्तव में वह शाइस्तगी, वह नफासत से कौल कहने का सलीका और बाकमाल अभिनय के 70 साल हमारे दिलों में हमेशा जिंदा-ओ-जावेद रहेंगे. अलविदा दिलीप साहब और गुरुदत्त को नमन.■

नेहा का छाता

कुसुम अग्रवाल

'नेहा देखो मैं तुम्हारे लिए एक नया छाता लाई हूं. तुम इसे अपने बस्ते में रख लो ताकि जरूरत पड़ने पर यह तुम्हारे काम आए', मां ने कहा.

नेहा ने ध्यान से उस छाते को देखा. वह नीले रंग का छाता उसके पहले वाले छाते से भी अधिक सुंदर था. मैं इस छाते को खराब नहीं करूंगी, नेहा ने सोचा और छाते को अपने बस्ते में रखकर स्कूल की ओर चल पड़ी.

सावन का महीना था. कुछ ही देर चलने के बाद बूंदाबांदी शुरु हो गई. नेहा भीगने लगी पर उसने अपना छाता नहीं निकाला. वह बिना छाते के ही अपने रास्ते पर चलती रही. बूंदा-बांदी से उसकी यूनिफॉर्म और बस्ता दोनों थोड़े-थोड़े गीले हो गए थे. अचानक नेहा के बस्ते में कुछ हलचल सी हुई. उसने अपना बस्ता खोलकर देखा. वहां सब कुछ ठीक-ठाक था. उसने बस्ता फिर से बंद कर दिया और स्कूल के रास्ते पर बढ़ गई.

यूं तो नेहा को बूंदा-बांदी बहुत अच्छी लगती थी परंतु इस समय उसे स्कूल जाना था और वह भीगकर स्कूल नहीं जाना चाहती थी इसलिए उसे यह बूंदा-बांदी अच्छी नहीं लग रही थी. काश! यह बूंदा-बांदी बंद हो जाए वरना मैं पूरी गीली हो जाऊंगी, वह बड़बड़ाई. उसकी बड़बड़ाहट सुनकर बस्ते में फिर हलचल हुई. यह हलचल पहले वाली हलचल से तेज थी. नेहा रुक गई और वर्षा से बचने के लिए एक पेड़ के नीचे खड़ी हो गई. पेड़ के नीचे खड़ी होकर उसने फिर अपना बस्ता खोला. वहां फिर सब कुछ ठीक था. फिर ये हलचल कैसी? वह सोचने लगी. तभी उसे लगा कि उसके बस्ते में पड़ा नीला छाता हिल रहा है और वह कुछ कहना चाहता है.

'बोलो क्या बात है? क्यों बार-बार हिल-डुल कर मुझे परेशान कर रहे हो?' वह ज़रा गुस्से से छाते से बोली.

इस पर नीला छाता बोला, 'मैं तुम्हें परेशान नहीं करना चाहता हूं. मैं तो बस ये चाहता हूं कि तुम मुझे बस्ते में से बाहर निकालो.'

'नहीं मैं तुम्हें बस्ते से बाहर नहीं निकालूंगी. बाहर बरसात हो रही है. तुम गीले और गंदे हो जाओगे.'

'तो क्या हुआ? मैं बस्ते में पड़ा-पड़ा बोर हो गया हूं. मैं भी वर्षा का आनंद लेना चाहता हूं, खुली हवा के साथ झूमना चाहता हूं. बस्ते के अंदर पड़े-पड़े मेरा दम घुट रहा है', वह बोला.

'एक बार कह दिया ना मैं तुम्हें बाहर नहीं निकालूंगी. मेरा पहले वाला छाता भी इसी कारण खराब हो गया था. कभी धूप में, कभी वर्षा में रहने के कारण उसका रंग भी फीका पड़ गया था और धीरे-धीरे उसका बदन भी जर-जर हो गया था. तुम जानते हो मुझे अपना वह छाता बहुत प्यारा लगता था. मुझे बहुत दुख हुआ था.'

'इसमें दुखी होने की क्या बात थी? दुनिया में हर चीज पुरानी होकर फटती है, यह प्रकृति का नियम है परंतु उसका उपयोग होने में ही उसकी सार्थकता है. यदि तुम मुझे बस्ते में से बाहर नहीं निकालोगी तो मैं तुम्हें वर्षा से कैसे बचाऊंगा? देखो तुम गीली हो रही हो.'

नेहा ने एक नजर अपने कपड़ों पर डाली. सचमुच बूंदाबांदी के कारण उसके कपड़े कुछ गीले हो गए थे. फिर उसने एक नजर अभी भी हो रही बूंदा-बांदी पर डाली. अब बूंदा-बांदी पहले से काफी बढ़ गई थी. नेहा ने सोचा यदि मैं इस बूंदा-बांदी में बिना छाता खोले स्कूल जाऊंगी तो बुरी तरह से भीग जाऊंगी. तब नेहा ने बस्ते में से छाता निकाला और उसे खोला. वाह! वह नीला छाता वास्तव में बहुत सुंदर था. उस पर कई सुंदर चित्र भी बने हुए थे.

बस्ते में से निकलते ही छाता मुस्कुराने लगा. उसने अपना पसीना पोंछा और ठंडी हवा के साथ लहराने लगा. फिर छाता बोला, 'अब तुम मुझे अपने हाथ में पकड़ कर सिर पर तान लो. मैं तुम्हें बूंदा-बांदी से बचा लूंगा.'

'मगर तुम तो गीले हो जाओगे ना. क्या तुम्हें गीले होने से डर नहीं लगता?'

छाता हंसने लगा और बोला, 'इसमें डरना कैसा? यह तो मेरा काम है. मैं सर्दी, गर्मी और वर्षा किसी से नहीं घबराता हूं और यदि किसी की सेवा करते-करते मेरे प्राण भी चले जाएं तो मुझे परवाह नहीं. छाते की बात सुनकर नेहा हैरान हो गई. वह बोली वाह! तुम तो बड़े बहादुर हो पर फिर भी मैं तुम्हें गंदा नहीं करना चाहती. मुझे अपनी चीजों को गंदा करना या तोड़ना फोड़ना पसंद नहीं है. मैं अपने खिलौने, कॉपी-किताबें, कपड़े सभी संभाल कर रखती हूं.'

'यह तो बहुत अच्छी बात है, परंतु चीजें संभाल कर रखना और उनका उपयोग न करने में अंतर है. सोचो यदि तुम पुस्तकें खरीद कर उन्हें केवल संभाल कर रखो और फटने के डर से उन्हें ना पढ़ो तो फिर उन्हें खरीदने से क्या लाभ? तुम किसी चीज का उपयोग करके भी उसे संभाल कर रख सकती हो.' छाते ने कहा.

नेहा को छाते की बात कुछ-कुछ समझ में आ रही थी. वह बोली, 'तुम्हारी बातें सोलह आने सच हैं. अब से मैं ऐसा नहीं करुंगी. मैं अपनी सभी वस्तुओं का यथा समय उपयोग करुंगी तथा फिर उन्हें संभालकर भी रखूंगी.'

'यह हुई ना बात, छाते ने हंसकर कहा. चलो अब स्कूल चलते हैं, तुम्हें देर हो जाएगी.'

नेहा ने छाते को अपने सिर पर तान लिया और स्कूल की ओर चल पड़ी. जब-जब छाते के बदन पर वर्षा की बूंदें पड़तीं, वह खुशी से झूम उठता. पूरे रास्ते उसने नेहा को बूंदाबांदी से बचाए रखा. अपना कर्तव्य निभा कर छाता बहुत खुश था और चीज़ों के सही इस्तेमाल की सीख पा कर नेहा भी खुश थी. ■

भूले बिसरे स्वाद बेर और बिरचुन

ऋतु चौधरी

बेर खाने का असली मज़ा तो पेड़ों से तोड़ कर खाने में ही आता हैं हालांकि सीजन में बाजार में खूब ठेली भर-भर कर मोल के मिलते हैं. आज भी पेड़ से तोड़कर खाने का लोभ-लालच गया नहीं. आजकल बाजार में इसकी कई वैरायटी आ गई हैं. बेर के नए-नए स्वाद आ गए हैं, पर देसी बेर के खट्टे-मीठे, हरे, लाल, पीले वाले बेरों के स्वाद की जगह कोई नहीं ले सकता. मुझे तो जहां भी पेड़ दिखता है, गाड़ी रुकवा लेती हूं. ताज़े बेर तोड़ कर खाने का आनंद ही कुछ और है. अहा! क्या आनंद है, क्या स्वाद है.

पर दु:ख की बात ये है कि अब पेड़ उस तादाद में नहीं हैं. खेतों की मेढ़ों से और खेर या गोंडे जिसमें पशु बांधते थे, उसके पास से बेर के पेड़ विलुप्त होते जा रहे हैं. पेड़ों का गायब होते जाना पर्यावरण के लिए भी अच्छा नहीं. बेर के नाम से गाना याद आ गया 'बेरी के बेर मत तोड़ो, कोई कांटा चुभ जाएगा'.

बचपन में इन्हें खाने में इतने मगन रहते थे कि तोड़ते समय कांटों की चुभन भी महसूस नहीं होती थी.

देसी बेर और इसके पत्तों के लाभ भी बहुत हैं. स्वाद के साथ सेहत का खज़ाना भी. बेर के पत्तों को पानी में उबाल कर या लेप बालों पर लगाने के अद्भुत फ़ायदे हैं. ये इम्युनिटी बूस्टर हैं. पाचन तंत्र और कब्ज जैसी बीमारियों में फायदेमंद. मस्तिष्क के विकास में सहायक. तनाव, अनिद्रा जैसी बीमारियों में फायदेमंद. शरीर को बैक्टीरिया से बचते हैं और बेर में मौजूद कैल्शियम दांतों और हड्डियों को मजबूत बनाता है.

सूखे, उबले बेर और सूखे बेर को कूटकर और पीसकर बनाया गया चूरण-बिरकुट बहुतों ने खाया होगा. बचपन के बाद सूखे बेर उबाल कर तो खा लिए कई बार पर ये चूर्ण नहीं.

नानी के घर जाते थे तो खूब खाते थे, बेर भी, बिरचुन भी.■

मिस्टर मीडिया

मीडिया की दुनिया का काला -सफ़ेद

समीक्षक : मो. वाजिद अली

(पुस्तक: मिस्टर मीडिया/ लेखक : राजेश बादल
प्रकाशक : प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, इंडिया
पेज : 350/ मूल्य : रु. 650.00)

भारत हमेशा ही अपनी संस्कृति, समृद्धि, ज्ञान, कला, और महापुरुषों के साथ-साथ यहां की बेबाक पत्रकारिता के लिए भी दुनिया भर में अपनी छाप छोड़ता आया है. लेकिन पिछले एक दशक में जिस तरह से भारत में पत्रकारिता का स्तर गिरता देखा गया वह चिंता का विषय तो है ही इसके साथ दुनिया भर में भारत की रुसवाई का सबब भी है.

कुछ दिनों पहले की खबर है, जब संसद के बाहर बड़े मीडिया संस्थानों के संवाददाता संसद की सुरक्षा में हुई चूक जैसे गंभीर विषय की रिपोर्टिंग करते समय एक पीले रंग की चीज़ जिसे वो स्मोक बम कह रहे थे को लेकर छीना-झपटी करते नज़र आए. इस तरह की स्तरहीन रिपोर्टिंग अब आम बात लगती है. यहां एक और बात आम हो गई है, वह है यूट्यूब बेस्ड मीडिया कर्मियों पर सत्ता पक्ष के लोगों द्वारा हमला करना, पिछले दिनों एक इसी तरह के मीडिया कर्मी का मामला सामने आया. बात राय बरेली में हो रही गृह मंत्री की सभा की है जब एक यूट्यूब पत्रकार ने सभा में बैठी महिलाओं से कुछ सवाल किए और सवाल पूछने की सज़ा में वहां मौजूद लोगों ने उन्हें इतना पीटा कि उन्हें पास के अस्पताल में भरती करना पड़ा. इस तरह की सैकड़ों घटनाएं पिछले दस सालों में देखने सुनने को मिली हैं.

राजेश बादल ने अपनी किताब 'मिस्टर मीडिया' में इस तरह की सभी घटनाओं को विस्तार से बताया है. मिस्टर मीडिया, दरअसल राजेश बादल द्वारा लिखे गए उन तमाम लेखों की श्रृंखला है जिसमें आपने विस्तार से हर एक कारण को बताया है जिससे पत्रकारिता का स्तर दिन ब दिन गिरता रहा है और गिर रहा है साथ ही पत्रकारिता से जुड़े अन्य मुद्दों पर भी अपना पक्ष रखा है. जो पाठकों के साथ-साथ नए पत्रकारों या पत्रकारिता की पढ़ाई कर रहे छात्रों के लिए जानना और समझना बेहद जरूरी है.

मिस्टर मीडिया, पत्रकारों, मीडिया संस्थानों, प्रेस क्लबों और संसद के साथ-साथ पाठकों और दर्शकों की भी बात करती है. फेक न्यूज़ और पेड न्यूज़ जिस तरह से आम जन को प्रभावित करती हैं और पत्रकारों के साथ हो रहे दुर्व्यवहार के लिए प्रेस क्लबों का जो रवैया है उसके अलावा कैसे राज्य सभा और लोक सभा टीवी का विलय हुआ और इसके क्या परिणाम हुए ऐसे तमाम मुद्दों पर 160 लेखों में बारीकी से बात की गई है. संभवत: भारत का यह पहला स्तंभ है, जो डिजिटल प्लेटफॉर्म पर इतने लंबे समय तक चला और अब 'न्यूज़ व्यूज़ डॉट कॉम' पर बिना किसी दबाव के चल रहा है. यह पोर्टल विश्व का अकेला पोर्टल है, जो हिंदी, अंग्रेजी, गुजराती और संस्कृत भाषाओं में है.

मिस्टर मीडिया, पत्रकारिता की भाषा पर भी बात करती है, जो कि एक गंभीर विषय है, किस तरह से कार्रवाई और कार्यवाही को एक दूसरे की जगह पर धड़ल्ले से इस्तेमाल किया जा रहा है और इन शब्दों को कायदे से किस तरह इस्तेमाल किया जाना चाहिए तथा अन्य शब्दों के गलत उच्चारण किस तरह से आम बात हो गई है, राजेश बादल ने बखूबी समझाया है. जैसे पुलिस एक्शन यानी कार्रवाई और संसद प्रोसीडिंग कार्यवाही.

अख़बारों, रेडियो और टीवी में अक्सर हम सुनते हैं केंद्रीय सुरक्षा मंत्री, केंद्रीय विदेश मंत्री और केंद्रीय रेल मंत्री जैसे कुछ अन्य विभाग, ध्यान दीजिए कि ये मंत्रालय तो सिर्फ़ केंद्र के तहत ही होते हैं. सड़क दुर्घटना के लिए कहा जाता है दर्दनाक हादसे में पांच लोग मारे गए. हादसा तो दर्दनाक ही होता है, यह समझने की ज़रूरत है. संख्या के बारे में भी गलतियां होती हैं. जैसे एक दर्जन लोग घायल हो गए, गोया आदमी न हुए, केले हो गए. इस तरह के कई उदाहरण किताब में मौजूद हैं.

मिस्टर मीडिया में राजेश बादल बताते हैं कि कैसे एक वक्त था जब पत्रकारों की ईमानदारी का देश भर में बोलबाला था, और पत्रकार सरकार से कड़े सवाल पूछने में परहेज ना करते थे. राजेश बादल आपातकाल का भी ज़िक्र अपनी किताब मिस्टर मीडिया में करते हैं और बताते हैं किस तरह से देश के पत्रकारों ने सरकार का खुल कर विरोध किया.

मिस्टर मीडिया, पत्रकारों की हो रही हत्या पर भी बात करती है. कैसे 2017 में दस पत्रकारों की हत्या हुई, इस तरह की तमाम खबरें सुनने और पढ़ने को मिली अफसोस मुख्यधारा की टीवी स्क्रीन और अख़बारों की कतरनों में इन खबरों को जगह नहीं दी गई. राजेश बादल बिहार प्रेस बिल और उसके बाद 1987 के प्रेस कानून का भी ज़िक्र अपनी किताब मिस्टर मीडिया में करते हैं.

जिस तरह से मिस्टर मीडिया में पत्रकारिता से जुड़े हर एक मुद्दे पर विस्तार से बात की गई है और जिस तरह से पत्रकारिता के मायने बदले हैं, बड़े मीडिया संस्थानों ने फेक न्यूज़ पर घंटो-घंटो के शो किए हैं बहसें की हैं ऐसे में मिस्टर मीडिया इस दौर के मीडिया के लिए आईना साबित हुई है जिसे सभी वर्ग और ख़ासतौर से पत्रकारिता से जुड़े लोगों को पढ़ना चाहिए. ■

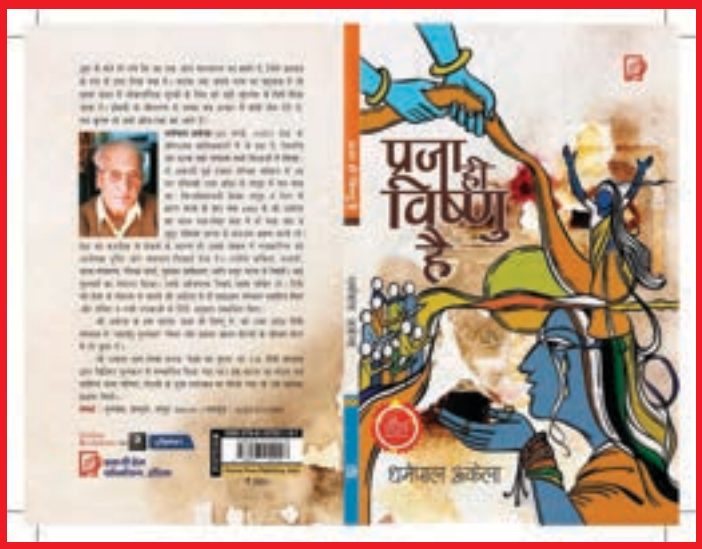

प्रजा ही विष्णु है : महाभारत कथा का लोकांतरात्मक पक्ष

समीक्षक : भारती पाठक

(पुस्तक: प्रजा ही विष्णु है, लेखक : धर्मपाल अकेला
प्रकाशक : प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, इंडिया/ पृष्ठ : 66/ मूल्य : रु. 260.00)

कहते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण होता है जिसके द्वारा तत्कालीन समाज में व्याप्त आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, वैचारिक अथवा व्यावहारिक सौंदर्य या कुरूपता को प्रतिबिंबित कराना लेखकों की महती जिम्मेदारी होती है. भारतीय साहित्य के समृद्ध संचय में कुछ ग्रंथ ऐसे हैं जिन्होंने अपनी उपस्थिति, लोकप्रियता के सामान्य चरण से आरंभ करके न केवल असाधारण रूप से दर्ज कराई बल्कि पूजनीय तक माने गए. महाभारत एक ऐसा ही ग्रंथ है जो इतिहास के साथ ही धर्म, स्मृतियों, संहिताओं, दर्शन, राजनीति तथा सामाजिक संरचनाओं का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करता है.

'प्रजा ही विष्णु है' नाटक विधा में लिखी गई पुस्तक है जिसके लेखक धर्मपाल अकेला जी हैं. यह पुस्तक महाभारत की तमाम कथाओं उपकथाओं में से एक द्रौपदी चीर हरण के प्रसंग पर आधारित है. नाटक तीन अंकों में है जिसका कथानक महाभारत के 'सभापर्व' से लिया गया है. नाटक के सभी पात्र इतिहास से हैं सो पुस्तक में लेखक ने इनके लिए विशेष रूप से पात्र परिचय का विवरण नहीं दिया है बल्कि अभिनव प्रयोग स्वरूप नाटक के प्रसंगों के अनुसार अपने संवादों से इसके पात्र अपना परिचय स्वयं देते हैं.

लेखक ने आरंभ में पुस्तक की लंबी भूमिका दी है जो वास्तव में इस पुस्तक का प्राण है और विशेष रूप से पठनीय है. इसमें लेखक महाभारत की आरंभिक रचना से लेकर कालांतर में इसके पुनर्लेखन से समाविष्ट हुए अनेक नए प्रसंगों, इसके शीर्षक का 'जय' से होकर 'महाभारत' रखे जाने तक की प्रक्रिया तथा इसके व्यापक सामाजिक प्रभावों के बारे में शोधपरक जानकारी देते हुए लिखते हैं

'व्यास जी ने जब जय (कालांतर में महाभारत) का सृजन किया था तो उनका उद्देश्य इतिहास रचना था. ग्रंथ में उनका संदर्शन भी है, 'नहि मानुषात्श्रेष्ठतरं हि किंचित'. यही जय, भारत और महाभारत में तब्दील होते-होते धर्मग्रंथ के समान पूजनीय हो गया. पूजनीय होने से इसमें निहित अनेक प्रश्न कई स्तरों पर 'अपरिक्षणीय' रह गए, सत्य भी अनछुआ रह गया, अनावृत्त नहीं हुआ. धर्म हमारे देश में परंपरा का रूप नहीं ले सका है. ट्रेडीशन (चलन) बनकर रहा है, गतानुगतिकता से भरा पूरा. परंपरा और ट्रेडीशन(चलन) का अंतर न करने के कारण सांप्रतिक जीवन क्लेशपूर्ण होकर मूल्यहीनता की ओर अग्रसर है.'

लेखक एक और रोचक तथ्य प्रस्तुत करते हैं कि 'महाभारत में वर्णित घटनाओं का संबंध जिन स्थानों से रहा, उत्तर भारत के उन अंचलों में पिछली शताब्दी के पूर्वार्ध तक इसका पठन-पाठन, श्रवण और इसकी पोथी सदागृहस्थों के घर में रखना भी प्रीतिकर नहीं रहा.' कहने का तात्पर्य है कि भूमिका इस नाटक को आद्योपांत पढ़ने की उत्सुकता को जगाने वाला तो है, साथ ही तथ्यपरक जानकारियों से भी परिपूर्ण है. लेखक ने भूमिका में तमाम पुस्तकों तथा अपने शोध के हवाले से कई ऐसे रोचक तथ्यों से जुड़े अपने विचार रखे हैं जो आरंभ में महाभारत को समाज में उचित स्थान न मिल पाने के कारणों तथा विस्मृत किये गए तमाम छोटे-छोटे पात्रों का विश्लेषण करते हैं 'बहुत से प्रसंग महाभारत में ऐसे हैं जहां जनसामान्य के अस्तित्व की सार्थकता प्रकट की जा सकती थी. छोटे से छोटे मानव के भीतर एक उदात्तता कहीं न कहीं विद्यमान रहती है. व्यास जी ने भुजा उठाकर बार-बार जिसका उद्घोष किया है, मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ कहीं नहीं है, महाभारत से कैसे बिसर गया.

नाटक में सशक्त संवादों के द्वारा लेखक ने उन पात्रों के वास्तविक मनोभावों को शब्द देने का प्रयास किया है जो निश्चित रूप से प्रभावशाली है. संवाद छोटे-छोटे और रोचक हैं जो पाठक को पात्रों से जोड़ते हैं. हां देश काल के अनुरूप संवादों के शब्द कहीं-कहीं क्लिष्ट अवश्य हो गए हैं किन्तु प्रसंग से जुड़ने पर उनका अर्थ स्पष्ट हो जाता है.

नाटक लेखन के लिए यही कथानक चुनने के बारे में लेखक का कहना है कि 'द्रौपदी मेरे लिए महज एक ऐसी स्त्री नहीं है, जिसे कुरुसभा में सबके सामने निर्वस्त्र करने की कुचेष्टा की गई, वह किसी कॉलेज की ऐसी छात्र भी हो सकती है जिसे उद्दंड युवा गुंडे राह में, बस में तंग करने की कुचेष्टा करते हैं और बस में सवार अन्य यात्री निरपेक्ष देखते रहते हैं.' लेखक की यही तार्किक दृष्टि जहां नाटक के द्वारा संवेदनात्मक रूप से पंगु हो चुके समाज को जगाने और आईना दिखाने का एक सशक्त प्रयास है वहीं अन्याय होते देखकर भी उसे अनदेखा करने या बच निकलने की प्रवृत्ति से इतर मनुष्य को मनुष्य होने का भान कराने का कार्य करती है.

इन तमाम खूबियों के अलावा नाटक का अंतिम दृश्य पूर्व में पढ़ी गई कथा तथा प्रचलित धारणा से एकदम अलग है जो किसी घटना को स्थापित विश्वासों से नहीं बल्कि तर्क के आधार पर स्वीकार करने पर बल देता है. संभवत: इस नाटक को लिखने के पीछे लेखक की मंशा भी यही है कि प्रचलित विश्वासों को तर्क से सिद्ध किये बिना, किसी बनी बनाई लीक पर चलने से लोगों को बचाना तथा उन्हें भ्रम से बचने हेतु दृष्टि प्रदान करना भी लेखन का उद्देश्य होना चाहिए. पुस्तक पठनीय व संग्रहणीय है. ■

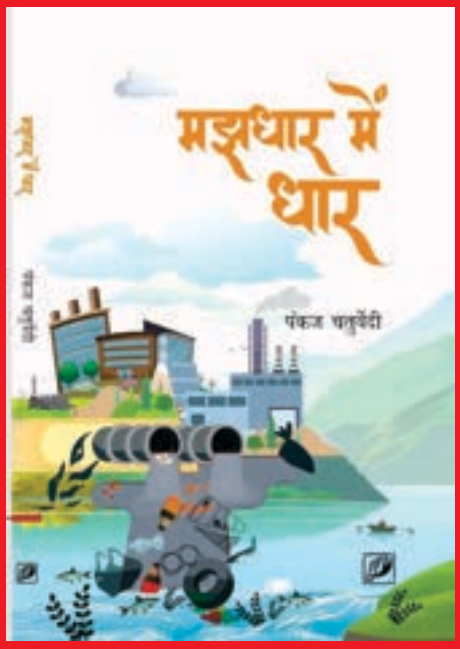

नदियों के संकट पर गंभीर विश्लेषण

समीक्षक : रोहित कौशिक

(पुस्तक : मझधार में धार, लेखक : पंकज चतुर्वेदी
प्रकाशक : प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, इंडिया
मूल्य : रु. 230.00)

वरिष्ठ लेखक एवं पर्यावरणविद् पंकज चतुर्वेदी की हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'मझधार में धार' नदियों की पीड़ा को मार्मिकता और गंभीरता के साथ व्यक्त करती है. पंकज चतुर्वेदी इस पुस्तक के माध्यम से नदियों की सेहत से जुड़े अनेक सवाल प्रमुखता से उठाते हैं. सरकारी नीतियों पर तो सवाल हैं ही, एक बड़ा सवाल यह भी है कि जल और नदियों की पूजा करने वाला समाज ही क्यों नदियों का दुश्मन बन गया? आज देश की अनेक नदियां प्रदूषण के कारण कराह रही हैं. समाज की उदासीनता के चलते अनेक नदियां दम तोड़ चुकी हैं. जिन नदियों को कभी बहुत ही सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, आज उन्हीं नदियों के प्रति उपेक्षा का भाव है. अनेक नदियां नालों में तब्दील हो चुकी हैं. दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि नदियों किनारे रहने वाले लोगों ने ही नदियों का ध्यान नहीं रखा. यही वजह है कि नदियों का जल भी लोगों को बीमारियां और मौत बांटने लगा. नदियों के बचाने के नाम पर काफी धन खर्च किया गया लेकिन नदियों की सेहत नहीं सुधरी. विकास के नाम पर बनने वाली सरकारी योजनाओं ने भी नदियों को मारने में कोई कसर नहीं छोड़ी.

पंकज चतुर्वेदी इस पुस्तक में यह सवाल उठाते हैं कि इस मुद्दे पर बनने वाली सरकारी नीतियों में व्यावहारिकता क्यों नहीं है? दरअसल सरकारी नीतियों में तो कई स्तरों पर कमी है ही, एक दूसरा पहलू यह भी है कि इस मुद्दे पर काम करने वाले लोग और एनजीओ व्यक्तिगत स्वार्थ से नहीं बच पाते हैं. यह सही है कि आज किसी न किसी रूप से नदियों को बचाने के लिए देश के अलग अलग हिस्सों में कई लोग काम कर रहे हैं. इनमें से कुछ लोग तो चुपचाप काम कर रहे हैं लेकिन कुछ लोगों में प्रचार की ऐसी भूख है कि उन्होंने अपने काम का एक अलग ही प्रचार तंत्र विकसित कर लिया है. नदियों को बचाने के नाम पर पुरस्कार प्राप्त करने की ऐसी होड़ हो रही है जो इस मुद्दे की सच्ची भावना के साथ एक तरह का खिलवाड़ ही है. ऐसे लोग अपने नाम से पहले स्वयं ही कई तरह के विशेषण भी लगाने लगे है. सवाल यह है कि नदियों को बचाने के इस तरह के प्रयास कितने कारगर होंगे. हो सकता है कि नदियों को बचाने के ऐसे प्रयासों से कुछ हद तक नदियों को पुनर्जीवन मिल जाए लेकिन ऐसे प्रयास लंबे समय तक नदियों को स्थिति नहीं सुधार सकते. इसलिए आज जरूरत इस बात की है कि जो लोग व्यक्तिगत या सामाजिक रूप से इस मुद्दे पर काम कर रहे हैं उनमें प्रचार की भूख न हो, तभी वे इस मुद्दे पर वास्तविक काम कर पाएंगे. दूसरी तरफ इस मुद्दे पर बनने वाली सरकारी योजनाओं में व्यावहारिकता पर ध्यान दिया जाए.

पंकज चतुर्वेदी रेत खनन को नदियों की मौत का एक बड़ा कारण मानते हैं. रेत खनन के कारण आपसी लड़ाई-झगड़े भी खूब होते हैं. अत्यधिक रेत खनन से नदियों का पूरा तंत्र असंतुलित हो जाता है. इससे वहां की जैवविविधता भी खत्म होती है और नदियों का प्रवाह भी बाधित होता है. जब लेखक गंगा के प्रदूषण और गंगा की सफाई के नाम पर होने वाले दावों की पोल खोलता है तो हमारी आंखें खुली रह जाती हैं. गंगा में टेनरियों और नालों का प्रदूषित जल रोकने के लिए स्थापित किए गए ट्रीटमेंट प्लांट का संचालन ठीक तरह से न होने के कारण स्थिति बदतर होती जा रही है. विडंबना यह है कि जो लोग गंगा की पूजा कर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हैं, वे ही लोग गंगा को प्रदूषण मुक्त करने के प्रति गंभीर नहीं है. प्रदूषण के मामले में यमुना का हाल भी गंगा से अलग नहीं है. दिल्ली में तो यमुना की हालत बहुत खराब है. लेखक ने हिंडन और काली नदी के प्रदूषण का भी सटीक विश्लेषण किया है. लखनऊ में गोमती नदी कई कारणों से अपने अस्तित्व के लिए जूझ रही है. अंधाधुंध जल दोहन और सहयोगी नदियों का संरक्षण न होने के कारण आज इसकी स्थिति बदतर हो गई है. इसी तरह सोन नदी को अपनी सेहत बरकरार रखने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है. रेत उत्खनन और कारखाने की गंदगी के कारण सोन नदी पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं. लेखक का मानना है कि अन्य नदियों की तुलना में अभी भी ब्रह्मपुत्र का जल इतना अधिक जहरीला नहीं हुआ है लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इस नदी का जल पूरी तरह से साफ है. ब्रह्मपुत्र नदी की एक समस्या इसके बहाव के कारण बढ़ रहा जमीन का कटाव और सालाना बाढ़ है तो दूसरी समस्या इस नदी के किनारे शहरीकरण और कलकारखानें हैं. इस पुस्तक में लेखक ने मेघालय और अरुणाचल प्रदेश की नदियों की वर्तमान स्थिति का गंभीर विश्लेषण किया है. इसके साथ ही क्षिप्रा, कावेरी, भावनी, अमरावती, तुंगभद्रा, गोदावरी, पेरियार, कृष्णा, हरमू, स्वर्णरेखा, जुमार, पोटपोटो, करम और साहिबी नदियों के संकट पर भी विस्तार से चर्चा की है. नदियों के संकट पर इस श्रमसाध्य अध्ययन के लिए पंकज चतुर्वेदी निश्चित रूप से बधाई के पात्र हैं. ■

आंचलिक भारत को जानें बच्चे

समीक्षक : मो. वाजिद अली

(पुस्तक नदी झूठ नहीं बोलती, लेखक: गिरिजा कुलश्रेष्ठ
चित्र : अशोक दास, प्रकाशक : प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, इंडिया
पृष्ठ : 72/ मूल्य : रु. 270.00)

बच्चों के लिए अनूठी कहानियां खासकर शहरी होते जा रहे बच्चों को पेड़, नदी, फूल, खेती, ग्रामीण जीवन और मानवीय संवेदना से परिचित करने वाली 12 कहानियों का यह संग्रह 'नदी झूठ नहीं बोलती' चर्चित बाल साहित्य लेखिका सुश्री गिरिजा कुलश्रेष्ठ का है.

'भले ही आम के पेड़ से बहुत स्वादिष्ट फल मिलते हों, निश्चित ही चमेली के फूल सभी को भाते हों, लेकिन प्रकृति के लिए बबूल जैसा कांटेदार पेड़ भी जरूरी है.'

एक छोटी सी कहानी 'नदी झूठ नहीं बोलती' बहुत खूबसूरती से यह संदेश दे देती है कि इस धरती पर जो कुछ भी है, सभी कुछ काम का है. विविधता ही इस धरती की सुंदरता है. ऐसी ही प्रकृति को करीब से झांकती, सभी को साथ ले आकर चलने का संदेश देती 12 कहानियों का यह गुलदस्ता, अपने बाल पाठकों को सूचना, मनोरंजन, संवेदना और भविष्य का रास्ता दिखाती हैं.

'छूटकु की उड़ान' हो या फिर 'पंखों वाला बीज' दोनों कहानियां मां के महत्व को बहुत मार्मिकता से महसूस करवाती हैं. हर कहानी खेत, किसान, पक्षी, पेड़ और इंसान जैसे विलुप्त हो रहे विषयों से पाठकों को गहराई से जोड़ती है.

लेखिका श्रीमती गिरिजा कुलश्रेष्ठ, शिक्षा विभाग में 43 वर्ष तक अध्यापन के बाद सेवानिवृत्त हैं. तीन कहानी संग्रह, दो कविता व गीत संग्रह, एक खण्डकाव्य और एक लघुकथा संग्रह सहित सात पुस्तकें और बच्चों की कहानियों की चार पुस्तकें प्रकाशित. नेशनल बुक ट्रस्ट से प्रकाशित 'मोर पंख' का कई भाषाओं में अनुवाद. आर्य सम्मान, किताबघर, दिल्ली एवं चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट द्वारा कहानियां पुरस्कृत. बालकविता, बालकहानियों सहित कुछ संग्रह प्रकाशनाधीन. ■

अंतर्राष्ट्रीय, हिंदी त्रैमासिक ऑन लाइन पत्रिका 'पहचान' हेतु आप भी रचनाएं भेज सकते हैं.

आलेख, समीक्षा, साक्षात्कार, शोध परक लेख, व्यंग्य, संस्मरण, यात्रा वृत्तांत, लोक साहित्य, बाल साहित्य, कविता, गीत, कहानी, लघु कथा आस्था, धरोहर, इतिहास, कला, विज्ञान, स्वास्थ आदि साहित्य की सभी विधाओं में रचनाओं का स्वागत है.

रचनाएं वर्ड फ़ाइल में अपनी तस्वीर और परिचय सहित भेजें. लेख के लिए 800 से 1,000 और कहानी के लिए अधिकतम शब्द सीमा 1600 शब्द है.

यदि आप अपना खींचा कोई चित्र पत्रिका के कवर पेज या फिर तिमाही चित्र चयन के लिए विचारार्थ भेजना चाहें तो अपने परिचय के साथ चित्र के बारे में बताते हुए ई मेल कर सकते हैं.

editor@pehachaan.com

UNLOCK
YOUR FINANCIAL POTENTIAL
with Global Finance

global finance
your best interest since 1999

Winner of 50+ industry awards

We're the Piece that allows you to navigate Your Finances with Ease and Provide Comprehensive Solutions for Mortgages, Personal Risk Insurance, Business, and Commercial Loans.

Join Global Finances' referral campaign for a chance to win a share of $4000 worth of travel! This is your opportunity to travel, create unforgettable memories and share amazing experiences with your loved ones.

The first prize is a whopping $2500 worth of travel, the second prize is $1000 worth of travel, and the third prize is $500 worth of travel.

Not only are you entered to win a share of the prize pool, if your referrals convert to successful for GFS business, you'll also receive $250 for every referral*.

HOW CAN YOU PARTICIPATE?

Its easy! Simply refer Global Finance to your friends and family before 30th November 2023. The more people you refer, the higher your chances of winning.

Contact:

NORTH SHORE BRANCH

9C Apollo Drive, Rosedale

P | 09 255 5591
M | 027 755 5531

E | info@globalfinance.co.nz
W | www.globalfinance.co.nz

1st PRIZE	2nd PRIZE	3rd PRIZE	
$2500 travel gift card	$1000 travel gift card	$500 travel gift card	$250 per *Referral per Customer T&C's apply

www.pppublishingindia.press

प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग प्रा.लि., भारत

(एम.एस.एम. ई.,भारत सरकार के अंतर्गत पंजीकृत)

बहुभाषी प्रकाशन संस्थान

- हिंदी, अंग्रेजी सहित सभी भारतीय भाषाओं में गुणवत्तापूर्ण पुस्तकों के प्रकाशक
- भारत की विभिन्न आदिवासी और लोक-बोलियों में अनुवाद का कार्य
- लेखकों को रायल्टी के भुगतान का प्रावधान
- पुस्तकों के व्यापक प्रचार-प्रसार व बिक्री की व्यवस्था
- विदेश में रहने वाले प्रवासी लेखकों के लिए विशेष योजनाएँ

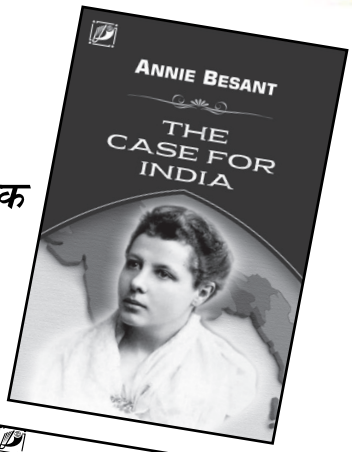

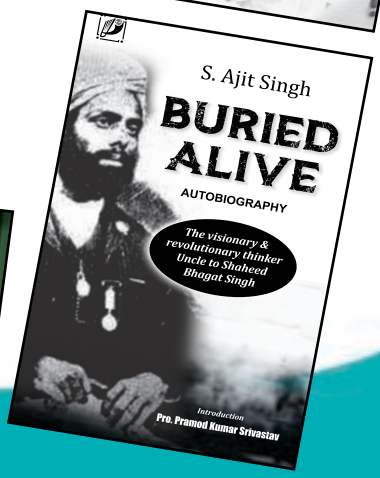

संपर्क

pravasiprempublishing@gmail.com

91-7827310876